R.N.I. No. 2321/57
फरवरी 2025

ओ३म्

रजि. सं. MTR नं. 04/2025-27
अंक 1

तपोभूमि

मासिक

महर्षि दयानन्द सरस्वती
ऋषि बोधोत्सव

26 जनवरी

गणतन्त्र–दिवस

भारत एक अद्‌भुत देश है संसार में इतनी विशेषतायें लिये कोई देश नहीं है। विधि ने यहीं पर मानव सृष्टि का सृजन किया। अपना वेदज्ञान इसी भूमि पर ऋषियों को प्रदान किया। सारे संसार में ज्ञान का सूर्य यहीं से चमका, इन सारी विशेषताओं के होते हुए समय की विचित्र गति है। एक समय ऐसा आया महाभारत युद्ध के बाद हमारा सब कुछ पतन के गहरे गर्त्त में समा गया। अपनी स्वतंत्रता को खोकर हम पराधीन हो गये। सत्य सनातन वैदिक धर्म की उत्तम परम्परायें ध्वस्त हो गयीं। न आश्रम व्यवस्था, न वर्ण व्यवस्था, न शिक्षा व्यवस्था रही, न शासन व्यवस्था रही सब कुछ ध्वस्त हो गया। बर्बर जातियों ने आक्रमण कर दिये हमारे धन वैभव सब लुट गये। समय–समय शिवाजी जैसे कुछ वीर अपने पराक्रम से हमारी रक्षा करते रहे जिससे कुछ जीवन की आशा बनी रहीं। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के अवतरण के बाद राष्ट्र में एक नई चेतना का संचार हुआ। देशभक्ति की भावना में उभार आया राष्ट्र के प्रति समर्पित वीरों ने आगे बढ़कर बलिदान दिया उसका प्रतिफल यह हुआ कि देश स्वतंत्र हुआ। 26 जनवरी 1950 को देश में गणतन्त्र लागू हुआ अर्थात् अब देश में व्यक्ति विशेष नहीं अपितु गण अर्थात् सबको साथ लेकर शासन व्यवस्था चलेगी जिसमें प्रत्येक नागरिक की सहभागिता होगी। सभी अपना मत देंगे सभी शासक वर्ग प्रतिनिधित्व करके चुना जायेगा। प्रसन्नता की बात यह है कि सदियों के बाद हमें स्वतंत्रता के पावन वातावरण में जीने का सौभाग्य मिला। इसके लिए जिन्होंने देश के लिए आत्मोत्सर्ग किया ऐसे हुतात्मा के प्रति जितनी भी कृतज्ञता ज्ञापित की जाय उतनी कम है।

पर दुर्भाग्य देश का यह रहा कि उस समय जब देश को स्वतंत्रता मिली। अधिकांश देश अशिक्षित था जिनको सत्ता सौंपी गयी वे सब अंग्रेजी शिक्षा और संस्कारों में पले बड़े हुए थे। उन्होंने उन्हीं संस्कारों से ओत–प्रोत होकर शासन और शिक्षा को दिशा दी जिससे भारत से अंग्रेज तो चले गये और अंग्रेजियत जड़ जमाये रही। आर्ष परम्परा जिसे ऋषि परम्परा या वैदिक परम्परा कहें जिससे संसार का कल्याण होता है उस परम्परा का गला घोंट दिया गया। इसके परिणामस्वरूप जो अशान्ति, अनाचार, व्यभिचार, स्वार्थपरता आदि अनैतिक व्यवहार यूरोप में फैले थे वे हमारे देश में भी प्रविष्ट हो गये। आज सारे देश में इन्हीं अव्यवस्थाओं का साम्राज्य स्थापित है। अशान्ति के घोर तिमिर से देश आच्छादित है किसी को कुछ भी मार्ग नहीं सूझ रहा। सदाचार की मिट्टी खराब है सर्वत्र स्वार्थपरता का साम्राज्य व्याप्त है। हर व्यक्ति एक दूसरे त्रस्त है दुःखी है। आत्म–हत्या और हत्या सामान्य सी बातें हो गयी हैं। विश्वास का दिवाला निकल गया। सत्य का सर्वथा लोप हो रहा है सरकारी विभागों में भ्रष्टाचार का बोल–वाला देखकर तो हृदय फटता है। उन अमर हुतात्मा की वह भावना जो उन्होंने बलिदान की बेला व्यक्त की थी कि–

कर चलें हम फिदा जॉ वतन साथियो।
अब तुम्हारे हवाले वतन साथियो।।

उनकी ये भावना कोने में पड़ी कराह रही है। संवेदनहीन सरकारी तन्त्र की अकथनीय कहानी है किसी ने ठीक ही करुणापूर्व अभिव्यक्ति करते हुए लिखा था कि सरकारी कर्मचारी का तो यह हाल कि मानो वह कह रहा है कि–

–शेष पृष्ठ संख्या 35 पर

तपोभूमि

ओ३म् वयं जयेम (ऋक्०)

शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक कल्याण की साधिका
(आर्य जगत में सर्वाधिक लोकप्रिय मासिक)

वर्ष–71 संवत्सर 2081 फरवरी 2025 अंक 1

*
संस्थापक
स्व0 आचार्य प्रेमभिक्षु

*
संपादक
आचार्य स्वदेश
मोबा. 9456811519

*
व्यवस्थापक
कन्हैयालाल आर्य
मोबा. 9759804182

*
फरवरी 2025

*
सृष्टि संवत्
1960853125

*
दयानन्दाब्द: 201

*
प्रकाशक
सत्य प्रकाशन, मथुरा

अनुक्रमणिका

लेख–कविता		पृष्ठ संख्या
वेदवाणी	–डॉ0 रामनाथ वेदालंकार	4–5
कृमि–चिकित्सा	–स्वामी ब्रह्ममुनि परिव्राजक	6–7
पूजा धर्म	–महात्मा हंसराज	8–10
देह होते हुए विदेह नाम क्यों?	–हनुमानप्रसाद शर्मा	11
कर्म गति	–महात्मा नारायण स्वामी	12–15
जीवन पथ	–आचार्य स्वदेश	16
वानप्रस्थ और संन्यास आश्रमों की वैदिकता एवं प्राचीनता	–आचार्य उदयन मीमांसक	17–20
बहुआयामी महापुरुष महर्षि दयानन्द सरस्वती	–रामेन्द्र कुमार आर्य	21–24
वेदों के अनुसार छन्द–स्वर संगीत	–हरिदत्त शास्त्री	25–29
सत्यार्थ प्रकाश प्रतियोगिता	–	30–32
घोषणा पत्र	–	33
ऋषि बोधोत्सव	–	34

❀❀❀

वार्षिक शुल्क 200/– पन्द्रह वर्ष के लिये शुल्क 2100/–

वेदवाणी

लेखक: डॉ0 रामनाथ वेदालंकार

किस कारीगर ने ?

कः सप्त खानि वि ततर्द शीर्षणि कर्णाविमौ नासिके चक्षणी मुखम्।
येषां पुरुत्रा विजयस्य मह्यनि चतुष्पादो द्विपदो यन्ति यामम्।।

–अथर्व0 10/2/6

शब्दार्थः–

(कः) किसने (सप्त खानि) सात छिद्रों को (वि ततर्द) खोदा है, रचा है (शीर्षणि) सिर में–(कर्णौ इमौ) ये दो कान, (नासिके) दो नासिका–छिद्र, (चक्षणी) दो आँखें, (मुखम्) और मुख, (येषाम्) जिनके (विजयस्य) विजय की (मह्यनि) महिमा में (पुरुत्रा) बहुत स्थानों में (चतुष्पादः द्विपदः) चौपाये और दोपाये (यामं यन्ति) मार्ग पर चलते हैं।

भावार्थः–

द्विपाद् और चतुष्पाद् मनुष्य, पक्षी और पशुओं के वैसे तो सम्पूर्ण शरीर ही विलक्षण कारीगरी के नमूने हैं, किन्तु इनके शिरोभाग में जो अद्भुत कर्तृत्व दिखायी देता है, उसके लिए रचयिता का सहस्रों बार भी गुण–कीर्तन किया जाए तो वह कम है। शिरोभाग गर्दन से लेकर ऊपर तक के हिस्से को कहते हैं। इसमें कण्ठ, हलक, जिह्वा–दन्तपंक्ति–तालु आदि से युक्त मुख, कान, नासिका–छिद्र, आँखें, ललाट, लघु मस्तिष्क, बृहत् मस्तिष्क, ज्ञानतन्तु आदि सब आ जाते हैं। हाथ, पैर आदि कोई अंग कट जाएँ, तो प्राणी जीवित रह सकता है, किन्तु शिरोभाग को धड़ से अलग कर देने पर मृत्यु का ही आलिंगन करना पड़ता है। शिरोभाग के सभी अवयव आश्चर्यजनक हैं, किन्तु इसमें विद्यमान सात छिद्रों की महिमा तो अपरम्पार है।

इन दोनों कर्णछिद्रों को देखो। बाहर से कैसा सुन्दर तालकटोरा–सा बना हुआ है। अन्दर से घुमावदार बनाकर अन्त में कान का पर्दा है। बोला हुआ शब्द जब पर्दे को स्पर्श करता है, तब श्रोता उसे सुनता है। किस कारीगर ने ये घुमावदार सुरक्षित कर्णछिद्र बनाये हैं, जिनमें धूल, कीट–पतंग आदि सहसा प्रवेश नहीं कर पाते? इन नासिका–छिद्रों को भी निहारो, जिनसे हम सुविधापूर्वक श्वास–प्रश्वास करते हैं। थोड़ी देर के लिए भी ये बन्द हो जाएँ, तो वायु का आवागमन न होने से हम बेचैन हो उठते हैं। इन चमकते हुए चक्षु–छिद्रों की ओर भी दृष्टिपात करो, जो इधर–उधर संचार करनेवाली पुतली से युक्त

डिबिया-से प्रतीत होते हैं। किसी वस्तु से निकलनेवाली किरणें जब आँख की कनीनिका पर पड़ती हैं, तब वह वस्तु दृष्टिगोचर होने लगती है। इन चक्षुओं में होनेवाला निमेषोन्मेष का व्यापार भी कैसा चमत्कारी है। इससे आँख थकती नहीं है और धूल आदि से भी यह रक्षा करता है। यह मुख-छिद्र भी कैसा अनोखा है, जो खान-पान करता है, परब्रह्मरूप कलाकार ने ही इन सातों छिद्रों की रचना की है। इन सातों छिद्रों की विजय की ही यह महिमा है कि सब द्विपाद्-चतुष्पाद् कानों से सुनते हुए, आँखों से देखते हुए नासिका-छिद्रों से श्वास-प्रश्वास करते और गन्ध को सूंघते हुए और मुख से गान गाते हुए आनन्द से मार्ग पर चलते चले जाते हैं। हे प्रभुवर ! तुम्हारी इन चमत्कारिक देनों के लिए हम तुम्हारा कोटिशः धन्यवाद करते हैं। ❁

तपोभूमि मासिक के पाठकों से विनम्र निवेदन

तपोभूमि' मासिक पत्रिका प्रतिमाह आप तक पहुँच रही है। हमारा हर सम्भव प्रयास यही रहता है कि पत्रिका में उच्चकोटि के विद्वानों के सारगर्भित लेख प्रकाशित करके आर्यसमाज और महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के सिद्धान्तों के अनुसार प्रचार करते हुये यह पत्रिका जन-जन तक पहुँचे। ताकि वे इसका पूर्णतया लाभ प्राप्त कर सकें। लेकिन यह तभी सम्भव है जब आप सबका सहयोग हमें मिले।

'तपोभूमि' मासिक के पाठकों से निवेदन है कि जिन्होंने अपना वार्षिक शुल्क चालू वर्ष या पिछले वर्ष का शुल्क अभी तक नहीं भेजा है। वे शीघ्रातिशीघ्र शुल्क भिजवाने की व्यवस्था करें। वार्षिक शुल्क 200/- दो सौ रुपये तथा पन्द्रह वर्ष हेतु 2100/- दो हजार एक सौ रुपये भेजकर पत्रिका पढ़ने का लाभ उठायें।

हम आपको प्रति माह पत्रिका पहुँचाते रहेंगे। आपके सहयोग व हमारे परिश्रम से निरन्तरता बनी रहेगी और महर्षि दयानन्द सरस्वती जी व आर्यसमाज का प्रचार-प्रसार जन-जन तक भी होता रहेगा।

हमें अपने ग्राहक महानुभावों से यही अपेक्षा है कि बिना विघ्न कार्य सुचारू रूप से चलता रहे। साथ ही यह भी प्रार्थना है कि आप अपने परिश्रम से नवीन ग्राहक बनवाने का सौभाग्य प्राप्त करें।

-धनराशि भेजने हेतु बैंक का नाम व पता एवं खाता संख्या-

इण्डियन ओवरसीज बैंक

शाखा युग निर्माण योजना, गायत्री तपोभूमि, जयसिंहपुरा, मथुरा

I F S C Code- IOBA 0001441

'सत्य प्रकाशन' खाता संख्या- 144101000002341

दान देने हेतु- श्री विरजानन्द ट्रस्ट' खाता संख्या- 144101000000351

सत्साहित्य का प्रचार-प्रसार करना ही राष्ट्र की सर्वोत्तम सेवा है।

गतांक से आगे–

कृमि चिकित्सा

लेखक: स्वामी ब्रह्ममुनि परिब्राजक

एतास्ते अग्ने समिधः पिशाचजम्भनीः।

तास्त्वं जुषस्व प्रति चैना गृहाण जातवेदः।। 14।।

अर्थ– (जातवेदः अग्ने) हे उत्पन्नमात्र से जानने योग्य अग्नि! (ते) तेरे लिए (एताः पिशाचजम्भीः समिधः) ये मांसभक्षक कृमियों को नष्ट करने वाली समिधाएं हैं (ताः) उनको (त्वं जुषस्व) तू सेवन कर (च) और (एनाः) इनको (प्रतिगृहाण) कृमिनाशकार्य में उपयुक्त कर।

तार्ष्टाघीरग्ने समिधः प्रतिगृह्णाह्यर्चिषा।

जहात् क्रव्याद्रूपं यो अस्य मांसं जिहीर्षति।। 15।।

अर्थ– (अग्ने) हे अग्नि ! तू (तार्ष्टाधीः) तष्टों–तृषितों–मांसभक्षण रक्तपान में प्यासे कृमियों के समूह को अंघन करने वाली–उनकी गति को उलटने वाली, भगाने वाली या उनका घात करने वाली (समिधः) समिधाओं को (प्रतिगृह्णाहि) स्वीकार कर। जिससे कि (यो अस्य मांसं जिहीर्षति) जो इस मनुष्य के मांस को हरण करना–खाना चाहता है वह (क्रव्यान्) मांसभक्षक कृमि (अर्चिषा) तेरी ज्वाला से –लपट से (रूपं जहातु) अपने रूप को–आकार को–शरीर को त्याग दे।

इस सूक्त में अग्नि, वायु, विद्युत, सोम और उत्तम शुद्ध सुगन्धित समिधाओं के द्वारा मांसभक्षक कृमियों तथा जन्तुओं को नष्ट करने और उनके द्वारा खानपान आदि उपकरणों में आए दोषों की चिकित्सा का वर्णन है साथ में कृमि–विज्ञान की भी अनेक बातों का बोध मिलता है जो संक्षेप में निम्न प्रकार है–

(1) सूक्ष्म कृमियों के भी आंख, हृदय, जिह्वा और दांत आदि का काम करने वाले अंक होते हैं। अग्निधूम का प्रभाव किसी की आंखों को नष्ट करता है, किसी के हृदय को बींधता है, किसी की जिह्वा और किसी के दांतों को निष्क्रिय बना देता है। (मंत्र 4)

(2) कृमियों द्वारा चूंटे गये, उखाड़े गये, अलग किये गये और खाए गये मांस अर्थात् शरीर–भाग को अग्नि से एवं अग्नि द्वारा गरम जल से धोने, गरम लेप करने, सेकने से तथा उग्र कृमि दूषित अंग–व्रण को अग्निदाह देने से घाव भरता है–जीवन आता है। (मंत्र 5)

(3) कच्चे, पक्के, विशेष पक्वान्न, खीर आदि पके भोजन, दूध, दही, मट्ठे, फल, अन्न, जल, शरबत आदि खानपान की वस्तुओं और पलंग, बिस्तर आदि उपकरणों में प्रविष्ट होकर जो कृमि पीड़ा

देते हैं उन्हें भी अग्नि नष्ट करती है तथा खानपान के कच्चे पदार्थों को अग्नि में पकाने, पके हुओं को पुन: गरम करने, फल आदि को भी गरम पानी से धोने और वस्त्र आदि को गरम जल में उबालने-धूप दिखाने आदि से कृमिदोष दूर हो जाते हैं। (मन्त्र 6-9)

(4) जो कृमि ऐसे हैं कि मनुष्यों का मांस खाकर और रुधिर पीकर अपने विष जैसे दोष को-प्रभाव को शरीर में छोड़कर मनुष्य की मानसिक शक्ति, बुद्धि, स्मृति को नष्ट करते हैं, उन्हें अग्नि, वायु, विद्युत् और सोम ओषधि नष्ट करते हैं तथा उनके प्रभावों को भी दूर करते हैं। (मन्त्र 10)

(5) अग्नि के अन्दर तीव्रगन्ध वाली शुद्ध समिधाएं-लकड़ियां होमने से मांस तथा रक्त का भक्षण-चूषण करने वाले कृमि भाग जाते हैं अन्यथा नष्ट हो जाते हैं। (मन्त्र 14-15)

अग्नि में होम हुआ पदार्थ या होम की आहुति यातना देने वाले कृमियों को भगाती है। यह बात अथर्ववेद में अन्यत्र भी कही है-

इदं हविर्यातुधानान् नदी फेनमिवा वहत।
य इदं स्त्री पुमानकरिह स स्तुवतां जनः।। -(अथर्व0 1/8/1)

अर्थ- (इदं हविः) अग्नि में डाली हुई यह होम्य वस्तु की आहुति (यातुधानान्) यातना पहुंचाने वाले कृमियों को (नदी फेनम्-इव-आवहत्) नदी जैसे फेन-मैल-कुचैल को साथ दूर भगा ले जाती है (यः पुमान्) जो पुरुष (स्त्री) स्त्री के सहित (इदम्-अकः) इस हवि-होम को करता है (स जनः) वह मनुष्य (इह) यहाँ (स्तुवताम्) समुन्नत होता है।

इस प्रकार होम द्वारा पीड़क कृमियों को भगाया जाता है। कृमियों को नष्ट करने वाली आंजन मणि, शंखमणि और जंगिड मणि भी अथर्ववेद में कही है। ❁

पाठकों से विनम्र निवेदन

'**तपोभूमि**' मासिक पत्रिका के पाठकों से विनम्र निवेदन है कि वर्ष **2024 तथा 2025** का वार्षिक शुल्क अविलम्ब '**सत्य प्रकाशन**' वेदमन्दिर, वृन्दावन मार्ग, मथुरा के कार्यालय को जमा करायें। आशा और विश्वास है कि पाठकगण अविलम्ब शुल्क भेजकर अपनी पत्रिका समयानुसार प्राप्त करते रहेंगे। जो महानुभाव ऑन लाइन द्वारा शुल्क जमा करते हैं वे फोन द्वारा कार्यालय को सूचित अवश्य करें ताकि उनका शुल्क जमा किया जा सके। **-व्यवस्थापक**

पराये दुःख से दुखित होने के समान कोई उत्कृष्ट सेवा नहीं है पर यह सेवा वे ही साधक कर सकते हैं, जो वर्तमान निर्दोषता के आधार पर किसी को बुरा नहीं समझते, किसी का बुरा नहीं चाहते और न किसी के प्रति बुराई करते हैं।

पूजा धर्म

लेखकः महात्मा हंसराज

(1) मनुष्यों को जानना उचित है कि जिस सूर्य प्रकाश के बिन वर्ष की उत्पत्ति वा नेत्रों का व्यवहार सिद्ध कभी नहीं होता। जिसने इस सूर्यलोक को रचा है उस परमेश्वर को कोटि असंख्यात धन्यवाद देते रहें।

(2) मनुष्यों को उचित है कि जिस वेद के जानने वा पालन करने वाले परमेश्वर ने वेद विद्या पृथिवी, जल, वायु और सूर्य आदि शुद्धि करने वाले पदार्थ प्रकाशित किये हैं उसकी उपासना तथा पवित्र कर्मों के अनुष्ठान से मनुष्यों को पूर्ण कामना और पवित्रता को सम्पादन अवश्य करना चाहिये।

(3) सब मनुष्यों को परमेश्वर की उपासना करके परस्पर मित्रपन को सम्पादन कर युद्ध में दुष्टों को जीत के राज्य लक्ष्मी को प्राप्त होकर सुखी रहना चाहिये।

(4) मनुष्यों को जिसकी अग्नि संज्ञा है उस ब्रह्म को जान और उसकी उपासना करके उत्तम बुद्धि को प्राप्त करना चाहिये। विद्वान् लोग जिस बुद्धि से यज्ञ को सिद्ध करते हैं उससे शिल्प-विद्या कारक यज्ञों को सिद्ध करके विद्वानों के संग से विद्या को प्राप्त होके स्वतन्त्र व्यवहार में सदा रहना चाहिये। क्योंकि बुद्धि के बिना कोई भी मनुष्य सुख को बढ़ा नहीं सकता इससे विद्वान् मनुष्यों को उचित है कि सब मनुष्यों के लिये ब्रह्म विद्या और पदार्थ विद्या की बुद्धि की शिक्षा करके रक्षा करें। और वे रक्षा को प्राप्त हुए मनुष्य परमेश्वर वा विद्वानों के उत्तम-उत्तम प्रिय कर्मों का आचरण किया करें।

(5) धर्म में प्रवृत्त कर मनुष्य जन्म को बारम्बार प्राप्त कराकर दुष्टाचार वा दुःखों से पृथक् करके इस लोक वा परलोक के सुखों को प्राप्त कराता है वह क्यों न उपास्य होना चाहिये।

(6) सब मनुष्यों को उचित है कि जैसे सत्य स्वरूप सब जगत् को उत्पन्न करने और सकल सुखों के देने वाले जगदीश्वर ही की उपासना को करके सुखी रहें इसी प्रकार कार्य सिद्ध के लिये अग्नि संप्रयुक्त करके सब सुखों को प्राप्त करें।

(7) मनुष्यों को चाहिये कि परमेश्वर की आज्ञा का पालन करके विद्वान युक्त मन से शरीर वा आत्मा के आरोग्यपन को बढ़ा कर यज्ञ का अनुष्ठान करके सुखी रहें।

(8) मनुष्यों को सब जगत् के उत्पन्न करने वाले निराकार सर्वव्यापी, सर्वशक्तिमान्, सच्चिदानन्दादि लक्षणयुक्त परमेश्वर, धार्मिक सभापति और प्रजा जन समूह ही का सत्कार करना चाहिये उनसे भिन्न और किसी का नहीं। विद्वान् मनुष्यों को योग्य है कि प्रजापुरुषों के सुख के लिये इस परमेश्वर की स्तुति प्रार्थना उपासना और श्रेष्ठ सभापति तथा धार्मिक प्रजा जन के सत्कार का उपदेश नित्य करें जिससे सब मनुष्य उनकी आज्ञा के अनुकूल सदा वर्तते रहें। और प्राण में सब जीवों की प्रीति

होती है वैसे पूर्वोक्त परमेश्वर आदि में भी अत्यन्त प्रेम करें।

(9) मनुष्यों को योग्य है कि शरीर मन वाणी और धन से परमेश्वर की उपासना आदि लक्षणयुक्त यज्ञ का निरन्तर अनुष्ठान करके असंख्यात अतुल पुष्टि को प्राप्त करें।

(10) मनुष्यों को योग्य है कि अधर्म के छोड़ने और धर्म के ग्रहण करने के लिये सत्य प्रेम से प्रार्थना करें प्रार्थना किया हुआ परमात्मा शीघ्र अधर्मों से छुड़ाकर धर्म ही में प्रवृत्त कर देता है परन्तु सब मनुष्यों को यह करना अवश्य है कि जब तक जीवन है तब तक धर्माचरण ही में रहकर संसार वा मोक्षरूपी सुखों को सब प्रकार से सेवन करें।

(11) मनुष्यों को चाहिये कि द्वेषादि त्याग विद्यादि धन की प्राप्ति और धर्ममार्ग के प्रकाश के लिये ईश्वर की प्रार्थना धर्म और धार्मिक विद्वानों की सेवा निरन्तर करें।

(12) जैसा परमेश्वर का स्वभाव है कि सूर्य और वायु आदि को सब प्रकार व्याप्त होकर रचकर धारण करता है इसी प्रकार सूर्य और वायु का भी प्रकाश और स्थूल लोगों के धारण का स्वभाव है।

(13) जैसे परमेश्वर अपनी विद्या का प्रकाश और जगत् की रचना से सब पदार्थों में उनके स्वभाव युक्त गुणों को स्थापन और विज्ञान आदि गुणों को नियत करके पवन सूर्य आदि को विस्तारयुक्त करता है वैसे सूर्य और वायु भी सबके लिये सुखों का विस्तार करते हैं।

(14) मनुष्यों को उचित है कि जैसे विद्वान् लोग ईश्वर प्राण और बिजली के गुणों को जान उपासना वा कार्य सिद्धि करते हैं वैसे ही उनको जानकर उपासना और अपने प्रयोजनों को सदा सिद्ध करते हैं।

(15) सब मनुष्यों को जिसकी कृपा वा प्रकाश से चोर, डाकू आदि अपने कार्यों से निवृत्त हो जाते हैं उसी की प्रशंसा और गुणों की प्रसिद्धि करनी चाहिये और परमेश्वर के समान समर्थ वा सूर्य के समान कोई लोक नहीं है ऐसा जानना चाहिये।

(16) कोई परमेश्वर के बिना सब जगत् के रचने वा धारण पालन और जानने को समर्थ नहीं हो सकता और कोई सूर्य के बिना भूमि आदि जगत् के प्रकाश और धारण करने को भी समर्थ नहीं हो सकता इससे सब मनुष्यों को ईश्वर की उपासना और सूर्य का उपयोग करना चाहिये।

(17) जैसे विद्वान् लोग ईश्वर में प्रीति संसार में यज्ञ के अनुष्ठान को करते हैं वैसा ही सब मनुष्यों को करना उचित है।

(18) मनुष्यों को परमेश्वर के विज्ञान के बिना सत्य सुख और बिजली आदि की विद्या और क्रिया कुशलता के बिना संसार के सब सुख नहीं हो सकते इसलिये यह कार्य पुरुषार्थ से सिद्ध करना चाहिये।

(19) मनुष्यों को परस्पर प्रेम वा उपकार बुद्धि से परमात्मा वा बिजली आदि का विज्ञान कर वा कराके धमानुष्ठान में पुरुषार्थ में निरन्तर प्रवृत्त होना चाहिये।

(20) मनुष्यों को चाहिये कि परमेश्वर की उपासना, विद्वान् की सेवा और विद्युत् विद्या का प्रचार करके शरीर और आत्मा को पुष्ट करनेवाली ओषधियों और अनेक प्रकार के धनों का ग्रहण करके चिकित्सा-शास्त्र के अनुसार सब आनन्दों को भोगें।

(21) मनुष्यों को उचित है कि परमेश्वर में ही मन बुद्धि को युक्तकर विद्वानों के संग से विद्या को पा सुखी हों अन्य मनुष्यों को भी इसी प्रकार आनन्दित करें।

(22) परमेश्वर ने जिस प्रथम प्रकाशवाले सूर्यादि, दूसरा प्रकाश रहित पृथिवी आदि और जो तीसरा परमाणु आदि अणुमय जगत् है उस सबको कारण से रचकर अन्तरिक्ष में स्थापन किया है उनमें से ओषधि आदि पृथिवी में प्रकाश आदि सूर्य लोक में और परमाणु आदि आकाश और इस सब जगत् को प्राणों के शिर में स्थापित किया है।

(23) जैसे सूर्य अपनी किरणों से सब भूमि आदि जगत् को प्रकाश आकर्षण और विभाग करके धारण करता है वैसे ही परमेश्वर और प्राण ने अपने सामर्थ्य से सब सूर्य आदि जगत् को धारण करके अच्छे प्रकार स्थापन किया है।

(24) मनुष्यों को जिस परमेश्वर ने पृथिवी सूर्य और त्रसरेणु आदि भेद से तीन प्रकार के जगत् को रचकर धारण किया है उसी की उपासना करनी चाहिये।

(25) सब मनुष्यों को योग्य है कि जो व्यापक परमेश्वर महत्तत्व सूर्य भूमि अन्तरिक्ष वायु, अग्नि, जल आदि पदार्थ वा उनमें रहने वाले ओषधि आदि वा मनुष्यादिकों को रच धारण कर सब प्राणियों के लिये सुखों को धारण करता है उसी की उपासना करें।

(26) सिंह जैसे अपने पराक्रम से अपनी इच्छा के समान अन्य पशुओं का नियम करता फिरता है वैसे जगदीश्वर अपने पराक्रम से सब लोकों का नियम करता है।

(27) मनुष्यों को उचित है कि इस सब जगत् का परमेश्वर ही रचने और धारण करनेवाला व्यापक इष्ट देव है ऐसा जानकर सब कामनाओं की सिद्धि करें।

(28) मनुष्यों को ईश्वर की इस सृष्टि में विद्वानों का अनुकरण सदा करना और मूर्खों का अनुकरण कभी न करना चाहिये।

(29) हे मनुष्यो जैसे सम्पूर्ण उत्तम गुण कर्मों के साथ वर्तमान जगदीश्वर और सभापति स्तुति करने योग्य हैं वैसे ही तुम लोगों को भी होना चाहिये।

(30) जैसे सकल ऐश्वर्य का देनेवाला जगदीश्वर है वैसे सभाध्यक्षादि मनुष्यों को भी होना चाहिये। ❁

दे मस्त फकीरी वह मुझको, शाहों की भी परवाह नहीं।
न मैं ही किसी का शाह बनूं, मेरा भी कोई शाह न हो।।

देह होते हुए विदेह नाम क्यों ?

लेखकः हनुमान प्रसाद शर्मा

एक बार महाराज जनक जी के मंत्री ने उनसे पूछा कि "महाराज, आपके देह होते हुए भी आपका नाम विदेह क्यो है?" महाराज ने कहा–"इसका उत्तर हम तुम्हें कुछ दिवस बाद देंगे।" जब कुछ दिन व्यतीत हुए तो महाराज ने एक दिन उस मंत्री का निमन्त्रण किया और घर में सम्पूर्ण पदार्थ ऐसे बनवाये कि जिनमें किसी में भी नमक न पड़ा था और मंत्री जी के भोजन करने के प्रथम ही एक ढिंढोरा इस प्रकार का पिटवा दिया कि "आज 4 बजे उक्त मंत्री को फांसी दी जायगी" और ढिंढोरा पीटनेवाले से कहा कि–"मंत्रीजी के द्वार पर तीन आवाजें लगा देना कि जिसमें मंत्रीजी सुन लें।" ऐसा ही हुआ। पश्चात् दो बजे महाराज जनकजी ने मंत्री को भोजनों के निमित्त बुलाया और बड़े आदर से भोजन कराया। जब मंत्रीजी भोजन करके निकले तब महाराज जनक जी ने कहा–"मंत्रीजी, यदि आप हमें यह बता दें कि किस–किस भोजन में कैसा–कैसा लवण था तो मैं आपको सूली से मुक्त कर दूँ।"

मंत्रीजी ने उत्तर दिया कि–"महाराज, मुझे मौत के भय से यह ज्ञान न रहा कि किस भोजन में लवण है किसमें नहीं। मैं कैसे बताऊँ?" तब तो महाराज जनकजी ने मंत्री से कहा–"सुनिये, आपकी सूली का समय यद्यपि 4 बजे था और दो बजे आप भोजन करने बैठे थे, भोजन के समय से मौत के समय तक दो घण्टे की जिन्दगी की आपको पूर्ण आशा थी, परन्तु फिर भी आपको लवण का ज्ञान शरीर, स्मरणशक्ति, जिह्वा और ज्ञान आदि के होते हुए भी न रहा; किन्तु मुझे तो एक मिनट की भी जिन्दगी की पूर्ण आशा नहीं, अत: जिस प्रकार तुम दो घण्टे का समय होते हुए भी देह होते हुए विदेह हो गये इसी प्रकार 1 मिनट की भी आयु की आशा न रखता हुआ मैं सदैव विदेह रहता हूँ। जनकजी का वाक्य है कि–

अनंतवत मे वित्तं यस्य मे नास्ति किंचन।
मिथिलायां प्रदीप्तायां न मे किंचन दह्यते।।

❁

ईश्वर की सर्वव्यापकता

गुरु–शिष्य का संवाद चल रहा था। गुरु ईश्वर की सर्वव्यापकता का उपदेश दे रहे थे। शिष्य की जिज्ञासा यह थी कि न दीखने वाले ईश्वर की सर्वव्यापकता पर कैसे आस्था की जाय। शिष्य से पानी मंगवा कर गुरु ने उसमें नमक मिला दिया। शिष्य को ऊपर नीचे तथा बीच से पानी लेकर चखने को कहा गया। शिष्य ने जब समस्त पानी का स्वाद नमकीन बताया तो गुरु ने कहा–**जैसे पानी में घुला हुआ नमक दिखाई न देने पर भी चखा जा सकता है। वैसे ही न दीखने वाले ईश्वर की सर्वव्यापकता को सिद्ध किया जा सकता है।**

गतांक से आगे–

कर्म–गति

लेखकः महात्मा नारायण स्वामी

(2) दान, जिसका संसार के सभी सम्प्रदायों और समाजों में मान है और जिसका करना प्रायः सभी ने धार्मिक कर्तव्य ठहरा रक्खा है, क्या है? वह यही है कि एक व्यक्ति अपने कर्म से दूसरे को लाभ पहुंचावे। कल्पना करो कि शीत की ऋतु में कुछ गरीब व्यक्तियों के पास, शीत से अपनी रक्षा करने के साधन नहीं हैं। एक सम्पन्न दानी ने उन सबको रजाई अथवा कम्बल प्रदान कर दिये। फल उसका यह हुआ कि उन सभी गरीबों का कष्ट दूर हो गया और उन सभी को सुख प्राप्त हुआ। इसी दान के सम्बन्ध में वेद में एक सूक्त है जिसके एक मंत्र का भाव यह है–"दान करने से घोड़ा, गौ (आदि पशु), सोना, चांदी और अन्न मिलता है इसलिये बुद्धिमान् मनुष्य दान को अपनी रक्षा के लिये कवचरूप से धारण करता है, इत्यादि। यहाँ प्रश्न यह है कि इस दान से अथवा ऊपर के उदाहरण में जिन लोगों को कम्बल आदि के मिलने से सुख हुआ उस सुख का कारण तो दानी का कर्म ही है। उसका फल तो दानी स्वयं पावेगा क्योंकि यह दान उसी का कर्म था परन्तु उसके दानरूप कर्म से अनेक गरीबों को लाभ हुआ।

दूसरा उदाहरण– एक गृहस्थ के घर में चोरी हो गई और चोर ने उसका समस्त धन अपहरण कर लिया। उस गृहस्थ के सभी व्यक्ति, जो उस परिवार में थे, दुःखी हो गये। उन्हें यह दुःख चोरों के चोरीरूप दुष्कृत्य ही से तो प्राप्त हुआ इस दुष्कृत्य का फल तो उन्हें (चोरों को) स्वयं भोगना पड़ेगा परन्तु उनके कर्म ने अनेक व्यक्तियों को दुखी कर दिया।

(3) जब दूसरों के कर्म से कोई पुरुष सुखी होने के सिवा दुखी भी हो सकता है तो फिर उसका कर्त्तव्य यह हो जाता है कि जहाँ अपने को अच्छा बनाने के लिये यत्न करे वहाँ दूसरों को भी अच्छा बनाने के लिये पुरुषार्थ करे तभी समाज अच्छा बन सकता है। इसीलिये विद्वानों ने नियम बना रक्खा है कि "मनुष्य को अपनी ही उन्नति में नहीं बल्कि सबकी उन्नति में सन्तुष्ट होना चाहिये।" अंग्रेजी शब्द (Society) सोसायटी के अर्थ ही साझे की हालत (A state of Partnership) के हैं।

(4) वेद की शिक्षा भी इस पक्ष का समर्थन करती है–

(क) ऋग्वेद में एक जगह लिखा है कि "अच्छे पुरुषों के कर्म हमारे लिये सुखदायक हों।"

(ख) अथर्ववेद में एक जगह उपदेश दिया गया है कि "अन्य प्राणियों के सम्बन्ध में जो कर्तव्य है अर्थात् उन का अच्छा बनाना, उसकी पूर्ति में प्रमाद नहीं करना चाहिये।"

(ग) फिर अथर्ववेद ही में एक दूसरी जगह अंकित है कि "यदि माता के या पिता के किये पाप से तू सोया (बीमार पड़ा) है तो "उनमोचन" और "प्रमोचन" की दोनों विद्यायें तुझे कहता हूँ।'

उन्मोचन– खोलना, ढीला करना, पापों को दूर फेंकना, पापों के प्रभाव को अपने ऊपर से दूर करना।

प्रमोचन– दूर रहना (पापों से जो माता पिता ने किये हैं उनसे दूर रहना) अर्थात् स्वयं वैसे

पाप न करना।

उन्मोचन रोग की चिकित्सा और प्रमोचन वह यत्न जिससे रोग न होने पावे। ये दोनों विद्यायें हैं जिनके जानने और अमल करने से मनुष्य रोगमुक्त हो जाता अथवा रहता है। इस प्रकार के तथा दान की महिमा आदि के अनेक मंत्र वेदों में आये हैं जिनसे अच्छी तरह से मनुष्य समझ लेता है कि अन्यों के कर्मों से अन्यों को हानि और लाभ अथवा दुःख और सुख दोनों पहुंचा करते या पहुंच सकते हैं। इस प्रकरण से सम्बन्धित एक प्रश्न और है जिसको स्पष्ट किये बिना यह प्रकरण पूरा नहीं हो सकता और वह यह है–

<u>एक के कर्म से दूसरे को दुःख प्राप्त होने में क्या दूसरे के कर्मफल भी शामिल हुआ करते हैं?–</u>

कई सज्जन इस प्रश्न का उत्तर हाँ में देते हैं और दे सकते हैं परन्तु हमारा, भलीभांति सोचा विचारा हुआ, उत्तर नकार में है। परन्तु इतना कह देना मात्र काफी नहीं कि दूसरे के कर्मफल पहले के कर्म में शामिल नहीं होते अपितु इस प्रश्न के दोनों पहलुओं पर गम्भीरता से विचार करने की जरूरत है।

<u>प्रश्न के पक्ष और विपक्ष में हेतु–</u> जो सज्जन प्रश्न का उत्तर हां में देते हैं उनका सब से बड़ा हेतु यह है कि उनकी दृष्टि में, कर्म का मौलिक सिद्धान्त यह है कि प्रत्येक पुरुष अपने ही कर्मफल से सुखी और दुखी हो। इसलिये यदि किसी को, किसी दूसरे के कर्म से, सुख या दुःख प्राप्त होता है, तो उसके लिये यही समझना चाहिये कि उसमें उसका कर्मफल भी शामिल है। अब थोड़ा इस पर विचार करना चाहिये। मनुष्य में स्वतन्त्रता के साथ कर्म करने की योग्यता ईश्वरप्रदत्त है, वह जो कुछ करता है अपनी स्वतन्त्र इच्छा से करता है। कल्पना करो कि तारीख 20 मई को दिन के 2 बजे "क" ने "ख" को अपने उसी कर्म स्वातन्त्रय के अधिकार से एक लाठी मारी, जिससे "ख" घायल हो गया। अब देखना यह है कि इस कृत्य के अन्दर "क" के कर्म–स्वातन्त्रय और "ख" का परतन्त्रता से फलभोग का, कितना कितना भाग शामिल है? कहा यह जाता है कि ठीक इसी समय "ख" को अपने किसी दुष्कृत्य के बदले में चोट लगनी थी और "क" ने अपनी स्वतन्त्र इच्छा से ठीक उसी समय उसे लाठी मार दी यदि "क" नहीं मारता तो कोई और दूसरा मार देता। अस्तु। इस कथन पर दो प्रश्न उठते हैं–

(1) यदि "ख" को फलरूप में चोट लगनी थी और "क" ने वही चोट लगादी तो इस अवस्था में "क" ने जल्लाद जैसा काम किया। जिस प्रकार जज की आज्ञा से जल्लाद एक व्यक्ति को फांसी देकर भी अपराधी नहीं बनता इसी प्रकार "क" को भी अपराधी नहीं ठहरना चाहिये उसने भी ईश्वराज्ञा का पालन ही तो किया है। इस पर कहा यह जाता है कि उसने बिना आज्ञा के चोट लगाई है इसलिये वह अपराधी है। बहुत अच्छा। इस पर आगे विचार किया जायगा। पहले यहां पर विचार करने योग्य बात यह है कि "ख" को एक खास समय में चोट लगनी थी और "क" ने ठीक उसी समय उसे अपने कर्म–स्वातंत्रय से लाठी मार दी और इन दोनों घटनाओं का सम्मेलन एक खास समय में हो गया तो यह सम्मेलन अचानक घटनागति से (By Chance) हो गया तो घटनागति तो कभी कभी होती है सौ में एक दो बार परन्तु यहां तो अवस्था यह है कि जब कभी भी कोई किसी को मारेगा या इनाम देगा तभी कहा जायगा कि इस में अन्तिम (दूसरे) पुरुष के कर्मफल शामिल थे फिर यह घटना अचानक या आकस्मिक घटनागति तो नहीं कही जा सकती क्योंकि 100 में सौ बार होने वाली बात है इसलिए यह तो नियम

के तौर पर होने वाली बात ही कही जा सकती है। इस प्रकार यदि किसी व्यक्ति को एक खास समय में शुभाशुभ फल मिलने वाला हो और कोई दूसरा व्यक्ति नियम के तौर पर उसी समय उसी शुभ या अशुभ फल को, अपने कर्म से, दे देवे तो उस देने वाले का यह कर्म, परतंत्रता ही से किया हुआ ही तो समझा जावेगा इसमें कर्म-स्वातंत्र्य की गंध भी नहीं है। परन्तु इस फल के शामिल होने के समर्थक, इच्छा अथवा कर्म-स्वातंत्र्य का भी समर्थन करते हैं इसलिये उन्हें या तो फल मिलने की बात का समर्थन छोड़ना चाहिये या कर्मस्वातन्त्र्य से हाथ धोना चाहिये। अस्तु, अब दूसरी, मौलिक सिद्धान्त वाली बात, पर विचार करना चाहिये।

(2) यह जो कहा जाता है कि "मौलिक सिद्धान्त यह है कि प्रत्येक पुरुष अपने ही कर्म के फल से दुखी या सुखी होवे।" ऐसा कहने वाले यह नहीं बतलाते कि इस मौलिकता की झांकी उन्हें कहां हुई? किसी बात के निर्णीत समझने के दो ही हेतु हो सकते और हुआ करते हैं तर्क और प्रमाण। जहां तक मुझे मालुम है इस मौलिकता के समर्थक अपने पक्ष के समर्थन में कोई प्रमाण उपस्थित नहीं करते न मेरी दृष्टि ही में इस प्रकार का कोई प्रमाण वेद शास्त्र में कहीं आया है। रहा तर्क वह इस पक्ष का समर्थक नहीं। थोड़ा ही विचार करने से यह बात प्रकट हो जायगी कि किस प्रकार तर्क इस वाद का समर्थक नहीं है।

"क" जिसने "ख" के लाठी मारी थी उसका अपराध केवल इतना ठहरेगा कि उसने बिना अनुमति के क्यों "ख" को मारा। "क" की लाठी से "ख" को चाहे चोट लगी चाहे वह मर गया तो ये सब कुछ तो उसे अपने कर्मों के फल से भोगना ही था। असल में "क" ने "ख" का कोई अपराध नहीं किया क्योंकि जो कुछ "क" की लाठी से हुआ यह तो उसके लिए अपने कर्मों के फल से होने वाला ही था। "क" ने केवल अपराध यह किया कि न्यायकारी की अनुमति नहीं ली। इसलिये "क" को न चोट लगाने का दण्ड मिलना चाहिये न वध करने या चोरी करने का किन्तु केवल अनुमति न लेने का और यह दंड जिस (ईश्वर) की अनुमति उसने नहीं ली है वह स्वयं उचित रीति से दे देगा। "ख" अथवा उसके पक्ष पोषकों को "क" के विरुद्ध लोक में कोई कार्यवाही नहीं करनी चाहिये न उस पर चोरी का अभियोग चलाना चाहिये न कत्ल का मुदमा दायर करना चाहिये न अन्य किसी प्रकार से कोई झगड़ा उससे करना चाहिये क्योंकि उसके साथ तो जो कुछ सुलूक "क" ने किया है वह किसी न किसी प्रकार होने वाला ही था। कल्पना करो कि ऐसा ही इस जगत् में होने लगे तो फिर क्या कोई व्यवस्था रह सकेगी। न्यायालयों को बन्द कर देना पड़ेगा, पुलिस को धता बतानी पड़ेगी, फौजी महकमों को रुखसत करना पड़ेगा। यदि कोई एक व्यक्ति आकर किसी दूसरे के देश, वस्तु अथवा स्वत्व पर, अधिकार जमा लेवे तो संतोष करके बैठ जाना पड़ेगा क्योंकि उस दूसरे के कर्मफलानुसार ऐसा ही होना था। फल इसका यह होगा कि लोग अकर्मण्य हो जावेंगे समाज नष्ट-भ्रष्ट हो जावेगा जैसा कि यहां (इस देश में) हुआ। इसलिये इस मौलिकता के राग को, बेवक्त की शहनाई (बाजा) समझ कर, छोड़ देना ही श्रेयस्कर हैं।

(3) एक और मजेदार बात, इस सम्बन्ध में, यह है कि न केवल किसी को दुःख देने से, दुःखदाता, अनुमति न लेने का अपराधी ठहरेगा किन्तु किसी को सुख देने से भी, सुखदाता भी उसी (अनुमति न लेने के) अपराध का अपराधी बनेगा क्योंकि किसी दानदाता ने, जो कुछ किसी दूसरे को, सुख पहुँचाने के लिये दिया वह तो अपने कर्म के फलानुसार, उसे मिलना ही था फिर दानदाता ने क्यों

बिना अनुमति लिये, उसे दान देकर, "दालभात में मूसलचन्द" की कहावत को चरितार्थ किया? दानियों को चाहिये कि समझ बूझ कर आगे दान देवें अन्यथा लेने के देने पडेंगे।

(4) इस शुभाशुभ कर्मों के प्रभाव में, प्रभावित व्यक्ति के, कर्मफल का अडंगा लगाने से, न केवल यह होगा कि अशुभ कमोर्ं के करने की प्रवृत्ति बढ़ेगी बल्कि यह भी होगा कि शुभ कर्म करने की प्रवृत्ति घटेगी। जब कोई किसी व्यक्ति को दान देगा या अन्य कोई दूसरा साधन, उसके सुख का उपस्थित करेगा तो वह कृतज्ञता प्रकाश करने के स्थान में झटसे कह देगा कि "यह वस्तु तो मुझे, अपने कर्मफलानुसार मिलने वाली ही थी तुम न देते तो कोई दूसरा देता, इस में मुझ पर तुम्हारा कोई अहसान नहीं।" बतलाओ तो सही, ऐसा उत्तर पाने पर किसी दानी या परोपकारी पुरुष का साहस बढ़ेगा अथवा उत्साह की वृद्धि होगी कि कोई परोपकार का काम करे?

(5) एक और बात भी इस सम्बन्ध में विचार करने योग्य है कि यदि ऊपर दिये हुये उदाहरण में "क" को वध करने का अपराधी ठहराया जावे और उसका समूचा कृत्य उसी के जिम्मे रखकर उसे फांसी की सजा देदी जावे तो प्रश्न यह है कि फांसी देने वाले का, यह स्वतंत्रकर्म कहा जायगा या इस में भी, फांसी पाने वाले के, पहले से निश्चित किसी भोग को, शामिल किया जावेगा, यदि कहो कि नहीं, तब तो स्पष्ट हो गया कि "क" ने स्वतंत्रता से वध किया था और फांसी देने वाले ने, स्वतंत्रता से फांसी रूप फल, "क" को दे दिया। अथवा फांसी देने वाले का कर्म, कम-से-कम, ऐसा सिद्ध हो गया कि जिससे दूसरे (क) को दु:ख तो पहुंचा परन्तु इसमें उस (क) का कोई भोग शामिल नहीं था। यदि कहा जाय कि "हां" तब यह बतलाना होगा कि "ख" के चोट लगने या वध होने में फल का भाग क्या और कितना था? यदि कहो कि "ख" को जो कष्ट पहुंचा यही फल था तो फिर कर्म क्या था? "क" का कर्म तो "ख" को कष्ट पहुंचाना ही था यदि यह फल है तो कर्म नहीं रहा और यदि कर्म है तो फल नहीं। यह स्पष्ट है कि समस्त सभ्य-संसार, इस प्रकार के अपराध को, अपराधी का स्वतंत्र कर्म ही समझकर उसे दंडित किया करता है, इसलिये इस में फल की गंध सूंघना निरर्थक है।

उपर्युक्त हेतुओं से यह बात साफ तौर से प्रकट हो जाती है कि एक व्यक्ति के कर्म से, जो दूसरे को, सुख या दु:ख मिला करता है, उस में दूसरे व्यक्ति के दु:खसुखरूप फल का किंचितमात्र समावेश नहीं होता अपितु वह पहले व्यक्ति का स्वतंत्र कर्म ही होता है और उसके फलाफल का उत्तरदाता वह पहला ही व्यक्ति हो सकता और हुआ करता है। दुनियां भर के व्यवहारिक नियम और कानून इसी नियम और कानून इसी नियम को स्वीकार करके बने और व्यवहृत हैं। इस फलाफल में दूसरे व्यक्ति के भोग को शामिल करना तर्कशून्य और प्रमाणरहित है इसलिये अस्वीकर्तव्य है। इस सम्बन्ध में यह बात अवश्य कही जा सकती है कि "क" के मारने से "ख" को जो चोट लगी और कष्ट उठाना पड़ा यद्यपि यह कष्ट उसके किसी कर्म का फल न था परन्तु इसके सम्बन्ध में यह कल्पना करना कदाचित् अयुक्त न होगा कि ईश्वर जो कर्म का फलदाता है यह विचार करके कि "ख" को वह कष्ट व्यर्थ उठाना पड़ा है, इसलिये वह इसे उसके अपने कर्मों के भोग में से कम कर देवे अर्थात् यदि "ख" को अपने कर्मों के बदले में 10 हिस्से कष्ट भोगना हो और "क" द्वारा पहुंचाई हुई तकलीफ की मात्रा एक हिस्से हो तो यह एक हिस्सा कम कर दिया जावे और उसे केवल 9 हिस्से कष्ट भुगतना पड़े और यदि उसका कोई बुरा कर्म न हो तो उसे इस कष्ट के बदले में कुछ सुख और मिल जावे। ❁

जीवन पथ

–रचयिताः आचार्य स्वदेश

पहला है कर्त्तव्य ब्रह्मचर्य का व्रत धारो।
आस्तिक रखो विचार बुद्धि अपनी विस्तारो।
इन्द्रिय रखो अधीन न किंचित् चंचल मन हो।
मन की चंचलता से ही तो घोर पतन हो॥
करो चित्त एकाग्र समझ लो व्रत ये दूजा।
जपो ओम् का नाम त्याग दो जड़ की पूजा॥
इससे होगा सद्विवेक मानस में समता।
सब दुःखों का मूल नष्ट होगी ये ममता॥
बिन ममता के चित्त हमारा शान्त रहेगा।
शान्त चित्त में आत्मज्ञान का भाव जगेगा।
गुण दोषों का ज्ञान यथाविधि होगा सारा।
दोषों का कर त्याग गुणों से भरो भण्डारा।
होगा जब गुण ग्राम हृदय में प्रेम भरेगा।
हृदय प्रेम से भरा दीन के दुःख हरेगा।
दुःख दुखी का देख वृत्ति सेवा की जगेगी।
ऐसी सेवा वृत्ति पार भव-सिन्धु करेगी।
पाओगे आनन्द बन्धु तुम इसी ढंग में।
मिल जायेगी विजय तुम्हें द्वन्द्वों की जंग में।
जीवन का ये सुपथ मोक्षपद का है गामी।
मिल जायेगा परम पिता जो अन्तर्यामी।
है स्वदेश भी वही जहाँ है तुमको जाना।
सदा शान्ति का धाम सभी का वही ठिकाना॥

❁

सत्साहित्य का प्रचार–प्रसार करना ही राष्ट्र की सर्वोत्तम सेवा है।

वानप्रस्थ और संन्यास आश्रमों की वैदिकता एवं प्राचीनता

लेखक: आचार्य उदयन मीमांसक (तेलंगाना)

मानव जीवन एक यात्रा है। यह यात्रा है भवसागर से तरने की। यात्रा सदा ही अपने मूल निवास स्थान से प्रारम्भ होकर पुनः वहीं समाप्त होती है। इस प्रवास काल में व्यक्ति को अनेक प्रकार की असुविधाएँ और कष्ट सहन करने पड़ते हैं तथा पर्याप्त परिश्रम भी करना पड़ता है। पुनरपि यह यात्रा व प्रवास कुछ ही दिनों का है, प्रवास को समाप्त कर पुनः अपने घर पहुँचना ही है, ऐसा समझकर व्यक्ति प्रवास-काल के कष्टों को सहर्ष सह लेता है। यात्रा जितनी योजनाबद्ध होगी, उतनी ही सुख एवं शान्ति युक्त होगी। मानव-जीवन की यात्रा भी अनेक दुःखों, विघ्नों एवं कष्टों से युक्त है और इसकी परिपूर्णता के लिए आ = समन्तात् अर्थात् सर्वविध श्रम = परिश्रम, पुरुषार्थ की आवश्यकता है। बस इसी यात्रा विशेष की परिपूर्णता के लिए, सफलता के लिए योजनाबद्ध व्यवस्था ही आश्रमव्यवस्था है। मनुष्य अपनी जीवनयात्रा को पृथिवी-लोक से प्रारम्भ कर अन्तरिक्ष-लोक में पहुँचता है, अन्तरिक्ष-लोक से द्युलोक में पहुँचता है और वहाँ से स्वर्लोक में पहुँचकर वहाँ स्व-स्थान की नित्य एवं शाश्वत आनन्दानुभूति प्राप्त करता हुआ स्व-जीवन-यात्रा को समाप्त कर लेता है-

पृथिव्या अहमुदन्तरिक्ष मारुहमन्तरिक्षाद् दिवमारुहम्।
दिवो नाकस्य पृष्ठात् स्वर्ज्योतिरगाम हम्।। -(यजु0 17. 67)

अतः मानवों की यह यात्रा चार पड़ावों से युक्त है। वे पड़ाव हैं- ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास आश्रम। यही आश्रम-व्यवस्था वैदिक काल में लोक-व्यवस्था के नाम से व्यवहृत होती थी। जो कि मन्वादि के काल से आश्रम-व्यवस्था के नाम प्रसिद्ध हुई। यहाँ यह भी ध्यातव्य है कि नाम मात्र ही अर्वाचीन है, न कि व्यवस्था। अब हम संक्षिप्त में यह दिखलाते हैं कि इस आश्रम-व्यवस्था (लोक-व्यवस्था) का उल्लेख वेद में अन्य कहाँ-कहाँ है।

वेद कहता है- **"प्र दैवोदासो अग्निर्देव इन्द्रो न मज्मना"** (साम0 51) व्यक्ति को ब्रह्मचर्य जीवन में दैवोदास अर्थात् देवों = माता, पिता, आचार्य और विद्वानों का दास, सेवक बनना चाहिए। जिससे वह अपने ब्रह्मचर्याश्रम में आयु, विद्या, यश और सर्वविध बल प्राप्त कर सके। आगे वेद भगवान् कहता है कि अग्निः = अग्रणी अर्थात् गृहस्थाश्रम में अपने शारीरिक, मानसिक तथा बौद्धिक दृष्टि से अग्रसर हो, अधिक से अधिक विकसित हो और साथ में लौकिक जीवन-यात्रा की आनन्दानुभूति प्राप्त करें। मन्त्र का आगे का कथन है-देवः = व्यक्ति को वानप्रस्थाश्रम में अपनी जीवन-यात्रा को एक क्रीड़ा समझें। क्रीड़ा में जैसे सभी कष्टों, चोटों को हँसते हुए सहन किये जाते हैं, वैसे ही अपनी जीवन-यात्रा के तृतीय पड़ाव में सभी कष्टों को क्रीड़ांग समझकर सहर्ष तपोमय जीवन बिताना चाहिए, साधना-

स्वाध्याय करना चाहिए, जिससे दिव्यत्व प्राप्त हो। ऋचा का अन्तिम उपदेश है-**प्रमज्मना इन्द्रो न** = व्यक्ति को ब्रह्म में लीन होकर, ब्रह्माश्रमी, तुरीयाश्रमी बनकर इन्द्र अर्थात् परमैश्वर्यवान् प्रभु के तुल्य आनन्दानुभूति, नित्यानन्द को प्राप्त करना चाहिए।

अबोध्यग्निः समिधा जनानां प्रति धेनुमिवायतीमुषासम्।

यह्वा इव प्र वयामुज्जिहानाः प्र भानवः सस्रते नाकमच्छ।। -(साम0 73)

(समिधा) तीनों लोकों की प्रतिनिधि रूप समिधाओं से ब्रह्मचारी (अग्निः) ज्ञानाग्नि के रूप में (अबोधि) उद्‌बुद्ध किया गया है। गृहस्थी को (प्रति-आयतीम्-उषासम्) प्रत्येक आनेवाले उषःकाल में अर्थात् प्रतिदिन (जनानाम्) अपनी सन्तानादि बन्धु-मित्रों और अन्य तीन आश्रमियों का (धेनुमिव) धेनु की भांति निस्स्वार्थ भावना से एवं पूर्ण प्रीति-युक्त होकर पालन-पोषण करना चाहिए। इस कर्त्तव्य पालन के पश्चात् उसी गृहस्थ के मोह माया में नहीं रहना चाहिए, अपितु (यह्वाः इव) पक्षियों के समान (वयाम्) शाखा को, घर को (प्र उज्जिहानाः) त्याग कर वनस्थ होना चाहिए। उस वानप्रस्थाश्रम में तप से राक्षसी वृत्तियों का नाश कर, स्वाध्याय से ज्ञानाग्नि को, विवेक को प्रदीप्त करके संन्यासाश्रम में प्रविष्ट होना चाहिए। उस उत्तमाश्रम में (भानवः) सूर्य के समान ज्ञानज्योतिष्मान् संन्यासी (नाकम् अच्छ प्र सस्रते) मोक्ष की ओर अग्रसर होते हैं और तत्तुल्य ही निरन्तर परिभ्रमण करते हुए लोक-कल्याण के लिए अज्ञानान्धकार का नाश करते हैं।

आचार्यो ब्रह्मचारी ब्रह्मचारी प्रजापतिः।

प्रजापतिर्वि राजति वि राडिन्द्रोऽभवद् वशी।। -(अथर्व0 11. 5. 16)

(आचार्यः ब्रह्मचारी) आचार्य ब्रह्मचारी, ब्रह्मचर्याश्रमी होता है। (प्रजापतिः ब्रह्मचारी) प्रजापालक आदर्श गृहस्थ भी ब्रह्मचर्य व्रतों का पालन करने वाला होता है। (प्रजापतिः विराजति) वह आदर्श गृहस्थ तेजस्वी वानप्रस्थ बनता है और वह (विराट्) तेजस्वी वानप्रस्थ (वशी इन्द्रः) इन्द्रियों को सम्पूर्ण रूप से स्वाधीन कर चुका अर्थात् पापभावनाओं को नितान्त समाप्त कर चुका हुआ यति= संन्यासी (अवभद्) होता है।

यहाँ चारों आश्रमों के उल्लेख के साथ-साथ यह भी उपदिष्ट है कि चारों आश्रमों में भोग-विलासों को त्यागकर आदर्श ब्रह्मचर्यव्रतों का पालन करना चाहिए, जिससे अपनी और समाज की उन्नति होती है।

ये चेह पितरो ये च नेह याँश्च विद्य याँ2उ च न प्रविद्य।

त्वं वेत्थ यति ते जातवेदः............. (यजु0 19. 67)

इस मन्त्र से 'देहलीदीप' के समान दो विषय प्रकाशित होते हैं। एक तो श्राद्ध (पितृयज्ञ) जीवितों का होता है, न कि मृतकों का। दूसरा वानप्रस्थ तथा संन्यास आश्रमों की वैदिकता। इस मन्त्र में कहा गया है कि 'जो पितर यहाँ हैं और जो पितर यहाँ नहीं हैं, उनमें (अविद्यमान पितरों में) भी जिन्हें हम जानते हैं और जिन्हें हम नहीं जानते हैं। हे जातवेदः! आप उन सब को जानते हैं और वे भी आपको जानते हैं।'

इस मन्त्र के आशय को समझने से पूर्व यह जानना आवश्यक है कि श्राद्ध किन पितरों का होता है? पिता, दादा और परदादा इन तीन पितरों का ही श्राद्ध करने का विधान सर्वत्र मिलता है। इन तीनों का ही विधान करने से एवं आगे के पितरों का विधान न होने से भी ज्ञाता होता है कि श्राद्ध जीवितों का ही होता है, न कि मृतकों का। यतोहि एक व्यक्ति के जीवन काल (100 वर्ष की आयु) में प्रायः उक्त तीन पितर ही जीवित रह सकते हैं, अधिक नहीं। अस्तु, प्रकृतमनुसरामः। उन तीन पितरों में पिता गृहस्थाश्रम में, दादा वानप्रस्थाश्रम में एवं परदादा संन्यासाश्रम में रहते हैं। अब मन्त्रार्थ को समझें–जो पितादि पितर यहाँ घर में (गृहाश्रम में) विद्यमान हैं और पितर (दादा एवं परदादा) यहाँ (घर पर) वर्तमान नहीं हैं अर्थात् वानप्रस्थी तथा संन्यासी बन गये हैं। उनमें भी जिन्हें = वानप्रस्थी (दादा) पितरों को हम जानते हैं, क्योंकि वे एक स्थिर स्थान पर रहते हुए साधना करते हैं और जिन्हें = संन्यासी (परदादा) पितरों को हम नहीं जानते हैं, क्योंकि वे परिव्राट् हैं। हे जातवेदः! --। यहाँ यह भी ध्यातव्य है कि जो पितर यहाँ हैं और जो यहाँ नहीं हैं, उनमें भी जिन्हें हम जानते हैं' ये बातें जीवित पितरों में ही घटेंगी, न कि मृतकों में। अतः आगे की बात 'जो यहाँ नहीं हैं, जिन्हें हम नहीं जानते' को मृतकों में घटाना परस्पर विरोध होगा, इसलिए इसका भी अर्थ जीवित पितर (संन्यासी) परक करना ही उचित है, जैसे कि ऊपर दिखाया गया है।

"पंचजनाः" शब्द की व्याख्या करते हुए आचार्य यास्क लिखते हैं कि– **"गन्धर्वाः पितरो देवा असुरा रक्षांसत्येके चत्वारो वर्णा निषादः पंचम इत्यौपमन्यवः"** (निरु0 3. 7)। यहाँ पंचजनाः से चार वर्णों एवं निर्वर्ण निषाद का ग्रहण किया है। ऐसा ही चार आश्रमों तथा निराश्रमी (आश्रम धर्म का पालन न करने वाले) का भी ग्रहण किया है। गां= वेदवाणीं धारयतीति गन्धर्वो ब्रह्मचारी– वेद ज्ञान को प्राप्त करने वाला ब्रह्मचारी ही गन्धर्व है। ब्रह्मचर्याश्रम का उद्देश्य ही वेदविद्या की प्राप्ति है। पितरः= वानप्रस्थी, वृद्ध ज्ञानी पुरुष। देवाः = भौतिक जगत् से विरक्त होकर दिव्य लोक में विचरण करने वाले संन्यासी। असुरः = असून् प्राणान् राति ददातीति असुरो गृहस्थी– प्राणदाता, जन्मदाता गृहस्थी ही असुर कहलाता है। रक्षः– रहसि परोक्षे क्षिणोति नाशयति तिरस्करोति आश्रमधर्मं यः स रक्षः अर्थात् जो प्रत्यक्षतः समाज की व्यवस्था के अनुसार किसी न किसी आश्रम में तो रहता है, पर परोक्षतः उन आश्रमधर्मों का पालन नहीं करता, उपेक्षा करता, नाश करता है, वह राक्षस कहलाता है। इस प्रकार 'पंचजनाः' के अन्तर्गत सभी वर्णों एवं आश्रमों को मानकर यास्क ने इन्हें वैदिक सिद्ध कर दिया है। क्योंकि ऋ0 10. 53. 4 और 8. 63. 7 में 'पंचजनाः' शब्द प्रयुक्त है। अतः उन दो मन्त्रों में चार वर्णों एवं आश्रमों का उल्लेख है। साथ में यह भी ज्ञापित होता है कि यास्क के समय तक वर्णाश्रमधर्मों का पालन होता रहा है।

प्राग्नये विश्वशुचे धियन्धेऽसुरघ्ने मन्म धीतिं भरध्वम्।
भरे हविर्न बर्हिषि प्रीणानो वैश्वानराय यतये मतीनाम्।। –(ऋ0 7. 13. 1)

हे मनुष्यों (मतीनाम्) मनुष्यों के बीच (वैश्वानराय) सब मनुष्यों के नायक (विश्वशुचे) सब को शुद्ध करने वाले (धियन्धे) बुद्धि को धारण करने हारे (असुरघ्ने) दुष्ट कर्मकारियों को मारने व तिरस्कार करनेवाले (अग्नये) अग्नि के तुल्य विद्यादि शुभ गुणों से प्रकाशमान (यतये) यत्न करने वाले संन्यासी के लिए (मन्म) विज्ञान और (धीतिम्) धर्म की धारणा को तुम लोग (प्र भरध्वम्) धारण वा पोषण करो, जैसे (बर्हिषि) सभा में (प्रीणानः) प्रसन्न हुआ राजा (भरे) संग्राम में (हविः) भोगने वा देने योग्य अन्न को धारण करता है (अपि च द्रष्टव्य- ऋ0 7. 13. 1-3, 7. 14. 1-3 महर्षि दयानन्द भाष्य)।

इन्द्रः .... जघान वृत्रं यतिर्न (साम0 954)

(इन्द्रः) परमैश्वर्यवान् परमात्मा (यतिः न) संन्यासी के समान (वृत्रं जघान) उपासकों में विद्यमान अज्ञानान्धकार एवं पाप वासनाओं को नष्ट करता है।

यहाँ स्पष्ट रूप से संन्यासी का एवं उसके कर्तव्य कर्मों का उल्लेख है कि वह स्वयं इन्द्रियों का दमन करने वाला यति बनें, लोकैषणा, वित्तैषणा, पुत्रैषणाओं का त्याग करना चाहिए और समाज में व्याप्त कदाचार, पाप भावनाओं तथा अज्ञानान्धकार रूपी बादलों को सूर्य की भांति छिन्न-भिन्न कर देने चाहिए अर्थात् संन्यासी को साधना से अपना आत्मोत्थान करते हुए निस्स्वार्थ भावना से लोकोपकार में अहर्निश संलग्न रहना चाहिए।

य इन्द्रः यतयस्त्वा भृगवो ये च तुष्टुवुः।
ममेदुग्र श्रुधी हवम्॥ -(ऋ0 8. 6. 18)

हे इन्द्र, परमात्मन् ! जो यति= संन्यासी हैं और जो भृगु= तेजस्व, तपस्वी संन्यासी हैं, वे सब आपकी स्तुति करते हैं। हे ईश्वर ! मेरी भी स्तुति सुनो।

मुनयो वातरशनाः पिशंगा वसते मला - (ऋ0 10 136. 2)

मुनि= वनाश्रमी लोग वायुभक्षंक होते हैं और पीतवर्ण के वस्त्र पहनते हैं।

इस मन्त्र में वानप्रस्थियों का उल्लेख ही नहीं, अपितु उनके रंगीन पीत वस्त्रों तक का उल्लेख है।

मुनिर्देवस्य देवस्य सौकृत्याय सखा हितः (ऋ0 10. 136. 4)

मुनि= वानप्रस्थी लोग सभी देवों का मित्र और सत्कर्म करने वाले होते हैं।

अभी तक हमने इन दोनों आश्रमों की वैदिकता की पुष्टि में निदर्शनार्थ कुछ सार्थ मन्त्र उपस्थित किये हैं। ऐसे और भी अनेकों मन्त्र हैं, जिनसे इनकी वैदिकता सिद्ध होती है। उद्धृत मन्त्रों से यह भी सिद्ध हो जाता है कि जब ये मन्त्र मानव-समाज को प्राप्त हुए थे, तभी से इन आश्रमों का अस्तित्व था। इतना ही नहीं जब ऋषि लोग मन्त्रों का दर्शन कर रहे थे, उस समय तक इन दो आश्रमों का भी अच्छा प्रचलन हो गया था। क्योंकि कुछ मन्त्रों का द्रष्टा वैखानस ऋषि हैं। वानप्रस्थियों को ही प्राचीन (वैदिक) काल में वैखानस कहते थे। इन वैखानसों के नियम व व्रतों का उल्लेख जिस ग्रन्थ में हो, वह वैखानसशास्त्र कहलाता है। और इनकी स्वस्थता की कामना से गाया गया साम भी 'वैखानससाम' कहलाता है। वानप्रस्थियों को वैखानस इसलिए कहते हैं कि वे आकर्षणीय, सुन्दर हिरण्मयपात्र से ढके हुए परमात्मा का विशेषरूप से खनन, खोज, अन्वेषण करते हैं। **-(शेष अगले अंक में)**

गतांक से आगे

बहु आयामी महापुरुष ! महर्षि दयानन्द सरस्वती

व्यक्तित्व व कृतित्व, तर्क की कसौटी पर ?

लेखकः रामेन्द्र कुमार आर्य, सीतापुर (उ0 प्र0)

21– <u>भक्ति रस के प्रति दृष्टिकोण</u>– स्वामी जी ईश भक्ति में डूबकर कई–2 घंटों की समाधि लगा लेते थे। निराकार एक ईश्वर की भक्ति का वेदानुकूल प्रचार किया व बहुदेववाद का खण्डन किया। कवि नेतराम आर्य सीतापुर के शब्दों में–

गर चाह तुम्हें मिल जाय प्रभू आष्टांग योग करना होगा।
ना प्रतिमा ईश्वर की कोई तुम्हें वेद पाठ करना होगा॥
जब समाधिस्थ होकर योगी, मन अन्तः संयम रखता है।
उठ कठिन योग की स्थिति में रस ब्रह्म मिलन का चखता है॥

22– <u>देश–विदेश के प्रति दृष्टिकोण</u>– स्वामी जी ने अपने ही देश में सुधार किया विदेशों से स्वामी जी के पास अनेकों आमंत्रण आये लेकिन वहां नहीं गये। मैडम ब्लैटस्की व कर्नल अल्काट मेरठ में स्वामी जी के शिष्य बने। स्वामी विवेकानन्द को पहले भारत में कोई नहीं जानता था जब इन्होंने सन् 1893 ई0 में शिकागो के सर्वधर्म सम्मेलन में भारत का प्रतिनिधित्व किया तब अमेरिका ने उन्हें उछाल दिया तब से भारत में स्वामी विवेकानन्द की प्रतिष्ठा बनी। जब स्वामी विवेकानन्द अमेरिका में हिन्दुत्व का प्रचार कर रहे थे तब विवेकानन्द के प्रान्त पं0 बंगाल में हिन्दू ईसाई हो रहे थे तब स्वामी श्रद्धानन्द ने शुद्धि आन्दोलन चलाया था। स्वामी विवेकानन्द के गुरु स्वामी रामकृष्ण परमहंस थे जो कलकत्ता की काली देवी के पुजारी थे। उस काली पर आज भी असंख्य मूक पशुओं की हत्या होती है।

23– <u>शास्त्रार्थ के प्रति दृष्टिकोण</u>– स्वामी जी ने संसार के मत–मतान्तरों से अकेले शास्त्रार्थ करके बड़े–2 पदाधिकारियों को परास्त किया। जीवन भर अनेकों कष्ट सहकर सफल हुए। सत्य का गला नहीं घोंटा अपितु अपनी लेखनी से व्याप्त बुराइयों को जड़ से उखाड़ फेंका। महर्षि को सबसे प्रिय सत्य था। महर्षि ने कहा भी था कि मेरे हाथ की सभी अंगुलियाँ बत्ती बनाकर जलायी जांय और मेरे मुख पर तोप बांध दी जाय और मुझसे बोलने कहा जाय तो भी मैं सत्य का प्रचार और असत्य का खण्डन करूंगा। स्वामी जी की वाणी का श्रोताओं पर प्रभाव पड़ता था। स्वामी सत्यानन्द (मथुरा) के कथनानुसार सभी प्राणियों के पैर एक जगह रख दिये जायें फिर उस पर हाथी अपना पैर रखे तो सबके पैर हाथी के पैर से ढक जाते हैं। इसी प्रकार हर महापुरुष के व्यक्तित्व कृतित्व को पढ़ने के बाद दयानन्द का व्यक्तित्व

कृतित्व पढ़ा जाय तो सब उसके अन्दर ही समाहित हो जाते हैं।

किसानों की एक किवदन्ती है कि एक बार प्रत्येक अनाज ने अपने-2 गुणों का बखान किया अन्त में कपास बोली कि-

अनाजों-अनाजों क्या बर्राने। मेरे बिछौना में सभी समाने।।

अर्थात् किसी महापुरुष ने सती प्रथा का अन्त किया, किसी ने अछूतोद्धार किया, किसी ने विधवा विवाह का समर्थन किया, फलस्वरूप महापुरुषों ! ने तत्कालीन परिस्थितियों में देशवासियों को डूबने से बचा लिया।

तर्क सम्पन्न आंग्ल शिक्षा से प्रभावित मुंशीराम और गुरुदत्त जैसे न जाने कितने युवाओं के मलीन मन को महर्षि के जीवन ने वैदिक आस्था के गंगाजल से परम पावन और प्रेरक बना दिया।

कवि के शब्दों में-

हर विषय पे जो देता था हमेशा बड़ी-2 तफसीलें।
सिन्धु से गहरी नभ से ऊँची गिरि से मजबूत दलीलें॥

24- महान अध्येता- ऋषि दयानन्द को यदि अन्य लेखकों व अध्येताओं से तुलना की जाय तो इनके अन्दर पर्याप्त विशेषताएं मिलती हैं। अनेक ग्रन्थों का अध्ययन व व्याकरण पढ़कर वेदानुकूल व वेद के प्रतिकूल तथ्यों का नीर क्षीर विवेचन किया। लगभग 1000 पुस्तकों का सार सत्यार्थ प्रकाश लिखकर पुनः स्वाध्यायशील लोगों को यथार्थता का बोध कराकर वेद शास्त्र, उपनिषद व एतिहासिक पुस्तकें रामायण व महाभारत के प्रक्षेपों से बोध करा दिया जिससे स्वाध्यायी लोगों को प्रक्षेपों की जानकारी हो सकी। लेकिन महर्षि दयानन्द ने चहुंमुखी दृष्टिपात करके देशवासियों को डूबने से बचाकर तैरना भी सिखा दिया कहा भी गया है। अपने को खोकर देखो जग में अपने को पाओगे।

कवियों के शब्दों में ऋषि दयानन्द पर काव्यात्मक टिप्पणियां-

हँस के मरा दुनियां में कोई और कोई रो के मरा।
मगर जिन्दगी पाई उसने जो कुछ हो के मरा॥
जी उस मरने से वह जिसकी प्रभु पर थी नजर।
जो उलझा रहा दुनियां में वह सब कुछ खो के मरा॥

❁

पाप ताप वारिधि तेने देव दयानन्द,
एते जन तारे जेते नभ में न तारे हैं।

❁❁

गिने जांय मुमकिन सेहरा के जर्रे समुन्दर के कतरे फलक के सितारे।
मगर तेरे एहसां दयानन्द स्वामी है कैसे सम्भव गिने जायं सारे॥
जनता को अमृत दान दिया पर स्वयं घोर विष पान किया।
तुम अमर हुए मरकर स्वामी सब जीवों का कल्याण किया॥

❀❀❀

हुआ चमकृत विश्व अरे यह कौन वीर वर संन्यासी।
जिसकी भीषण हुंकारों से कांप उठी मथुरा काशी॥
यह किसका गर्जन तर्जन है कौन उगलता प्याला है।
किसी वीणा से निकली आज धधकती ज्वाला है॥
ओ टंकारा की जलित ज्योति तू कभी न बुझने वाली है।
तुझसे जगमग यह जगती तल तुझसे भारत गौरवशाली है॥
तू दमक रही दुनियां भर में, तू चमक रही रण में वन में।
अभ्युदय और निःश्रेयस बन तू रमी हुई जग जीवन में॥

❀❀❀❀

वेद विपरीत पन्थों मतों मजहबों आदि की पोल कोई सुनाता न था।
उस ऋषि की तरह ढोंगियों को कभी कर निरुत्तर किसी ने हराया नहीं।
कस के देखा कसौटी पे जब-2 उसे पूर्ण रूपेण नरदेव असली मिला।
हर परीक्षा में उत्तीर्ण ही वह रहा, सत्य पथ से कभी पग हटाया नहीं॥

❀❀❀❀❀

वेद की ज्योति जिसने जलाई विमल, भक्ति सिखलाई शिव सच्चिदानन्द की।
मंत्र स्वाधीनता का पढ़ाया प्रथम, कुप्रथा भिन्नता भेद की बन्द की॥
नारियों को दिलाया उचित सत्व फिर, की प्रगति मन्द पाखण्ड छल द्वन्द की।
मन वचन कर्म से आर्य धारण करें उच्च शिक्षा उसी ऋषि दयानन्द की॥

❀❀❀❀❀❀

– ऋषि की मृत्यु पर एक मौलवी का रोना पूछने पर बताया कि दयानन्द वेदों वाला दुनियां से चला गया अब आर्य समाज की जड़ें पाताल में चली गई हैं।

ऋषि राज तेरा तेज चहुं ओर छा रहा है।
तेरे बताये मार्ग पर संसार आ रहा है॥

–महापुरुषों के जीवन चरित्र प्रकाश स्तम्भ होते हैं जो निराश हताश दुःखी व अशान्त जीवन जगत को नवजीवन व सन्मार्ग दिखाते हैं।

25– श्रेष्ठ लेखक– महर्षि के जीवन काल में महर्षि के त्याग के कारण महर्षि के वैदिक क्रिया कलापों का जनता पर विशेष प्रभाव पड़ा। तब महर्षि के अनुयाइयों ने महर्षि से कहा कि स्वामी जी जब आप नहीं होंगे तब हम वैदिक सिद्धान्तों के बारे में किससे क्या पूछेंगे। तब जनता के विशेष आग्रह पर महर्षि ने कोई व्यक्तिगत रचना न करके मानव जीवन के एहलौकिक व पारलौकिक सिद्धान्तों का संकलन किया तथा उसमें किसी भी पहलू को अछूता नहीं छोड़ा गया। सत्यार्थ प्रकाश लिखते समय भारत में अंग्रेजों का शासन था सत्यार्थ प्रकाश के 14वें समुल्लास में ईसाइयों की बाइबिल व 14वें समुल्लास में कुर्आन का खण्डन किया क्योंकि ऋषि दयानन्द के हृदय में सत्य, जीवन में त्याग व मन में निर्भीकता थी। आज सत्यार्थ प्रकाश सब के लिए सच्चा मार्गदर्शक व विश्व की समस्त समस्याओं को सुलझाने का समाधान प्रस्तुत करता है। महर्षि दयानन्द के तर्क तीक्ष्ण शब्दों के बिना इस महायुद्ध में विजयी नहीं बनाया जा सकता। वेदादि शास्त्रों तथा तत्पोषित धर्म की रक्षा के लिए महर्षि के विचारों की सामयिकता हमेशा बनी रहेगी। उनके विचार हमारी तर्क शक्ति को जीवित करते हैं। महर्षि दयानन्द की आँखें हमारा मार्ग प्रशस्त करती हैं।

26– अनेकों महापुरुषों के प्रेरणास्रोत– सन् 1857 में स्वतन्त्रता का प्रथम आन्दोलन आरम्भ हुआ। वीर मंगल पांडे ने गो चर्बीयुक्त कारतूसों को मुंह में लगाने से विरोध किया व प्लाटून के कमाण्डर को गोली से मार दिया फलस्वरूप वीर मंगल पांडे को फांसी दी गई। वीर मंगल पांडे आर्य विचारधारा का नौजवान व महर्षि दयानन्द के विचारों से प्रेरित था। मंगल पांडे की फांसी के बाद देश में अनेकों क्रान्तिकारियों की फौज तैयार हुई। अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द, लाला लाजपत राय, पं. रामप्रसाद विस्मिल, श्याम कृष्ण जी वर्मा, ऊधमसिंह धींगरा, भगतसिंह, चन्द्रशेखर आजाद आदि क्रान्तिकारियों को महर्षि के जीवन चरित्र से देशभक्ति की प्रेरणा मिली तथा कांग्रेस के इतिहास में डा. पट्टाभि सीता रमैया लिखते हैं कि स्वतन्त्रता आन्दोलन के मुख्य नायक महर्षि दयानन्द सरस्वती थे व स्वतन्त्रता आन्दोलन में भाग लेने वाले 80 प्रतिशत नेता+ आर्यसमाजी थे।

+अगर न देते योग देश के आर्य समाजी।
गोरे भारत नहीं छोड़ते राजी राजी।। –पद्मभूषण काका हाथरसी

–(शेष अगले अंक में)

वाणी का जादू

वाणी में ही जहर है और वाणी में ही अमृत है। कोयल अपनी मीठी वाणी से सभी को प्रिय लगती है और काग की स्थिति इससे भिन्न है। वाणी में जादू भरा आकर्षण है। स्वामी विवेकानन्द जब विश्व धर्म सम्मेलन में बोलने को खड़े हुए तो वहाँ अशान्त बातावरण था। उन्होंने सिर्फ इतना ही कहा 'भाईयो और बहनों'। सब शान्त हो गए, क्योंकि यह नई शुरुआत थी। इससे पूर्व सभी वक्ता 'जेन्ट्स एण्ड लेडीज' कहकर अपनी बात शुरू कर रहे थे। वाणी में विवेक चाहिए। विवेक है तो आप स्वयं ही विवेकानन्द हैं। बन्दूक से निकली गोली और मुख से निकली गाली वापिस नहीं आती। इसलिए सोच–समझकर बोलो। अपनी कद्र करना चाहते हो तो अपनी वाणी की कद्र करना सीखो। कम बोलो–काम का बोलो।

गतांक से आगे-

वेदों के अनुसार छन्द-स्वर संगीत

लेखकः- हरिदत्त शास्त्री, सिरसागंज (उ० प्र०)

वामदेव गान

ओ3म् भूर्भुवः स्वः। कया नश्चित्र आ भुवदूती सदावृधः सखा। कया शचिष्ठया वृता।। 1।।
ओ3म् भूर्भुवः स्वः। कस्त्वा सत्यो मदाना मँहिष्ठों मत्सदन्धसः। दृढा चिदारूजे वसु।। 2।।
ओ3म् भूर्भुव स्वः। अभी षुणः सखी नामविता जरितृणाम्। शतं भवास्यूतये।। 3।।

-सामवेद उत्तरार्चिक, अध्याय 1 खण्ड 4, मन्त्र 1 से 3

संगीत में सात स्वर होते हैं। साम के सप्त गान के 22 अक्षर होते हैं। इन 22 अक्षरों से सामगान करने वाला आदित्य से परे परम् ज्योति-ब्रह्म को प्राप्त कर लेता है, जो लोक दुःख और शोक रहित है। "द्वाविंशेन परमादित्यात् जयति तत् नाकं तत् विशोकम्।" 2-10-5, हिंकार 3, प्रस्ताव 3, आदि 2, उद्गीथ 3, प्रतिहार 4, उपद्रव 4, निधन 3। 3+3+2+3+4+4+3 = 22 अक्षर यह हैं।

महावामदेव गान

का ऽ 5 या नश्चा 3 यित्रा आभुवात्। ऊ। ती सदा वृधः सः खा। औ 3 हो हाइ। कया 23 शचाइ। ष्ठयौहो 3। हुमा 3। वार्तो 3 ऽ 5 हाइ॥ (1)॥

का ऽ 5 स्त्वा। सत्यो 3 मा 3 दानाम्। मा। हिष्ठा मात्सादन्ध। सा। औ 3 हो हाइ। दृढा 23 चिदा। रूजौहो 3। हुम्मा 21 वाऽ 3 सो 35 हायि॥ (3)॥

आ ऽ 5 भी। षुणा 3 सा 3 खीनाम्। आ। विता जरायि तृ। णाम्। औ 23 हो हायि। शता 23 म्मवा। सियौहो 3 हुम्मा 2। ता ऽ 2 यो 3 ऽ 5 हायि॥ (3)॥

सामवेद उत्तरार्चिक। अध्याय 1 खण्ड 4, त्रिक 3 मन्त्र 1 से 3 तक

अर्थ- सर्वत्र और सर्वदा विस्तृत-व्यापक सखा रूप परमात्मा हमें श्रेष्ठ बुद्धि और उत्तम कर्मों से प्राप्त हो सकता है। इस पंचभौतिक शरीर को पुष्ट और बलिष्ठ बनाने के लिए अन्न की आवश्यकता है, अतएव हम तुम्हारी शरण में आये हैं, हमारी ओर अभिमुख होकर अपना आश्रय दीजिए। हे जगदीश्वर ! क्योंकि तू असंख्य ऐश्वर्य प्रदान करता है, अतः हमारा, हमारे मित्रों और अपने भक्तों और उपासकों की उत्तमरीति से रक्षा के लिए हो। इसलिए तू हमारे लिए सब प्रकार से उपासना करने योग्य है।

संगीत में आबद्ध होकर मन्त्र के शब्दों में कहीं-कहीं कुछ विकृति भी आ जाती है। विकृति को साम विकार कहा जाता है। विकार छः प्रकार का है। 1. विकार-जैसे 'अग्ने' का 'ओग्नायि'। 2. विश्लेषण- जैसे वीतये का 'वोयि तो या वि'। 3. विकर्षण-विकर्षण द्वारा स्वर को खींचकर या मींचकर देर तक बोलना। 4. अभ्यास- किसी पद का बार-बार उच्चारण। 5. विराम- पद गान के मध्य किसी

स्वर पर ठहर जाना। 6. स्तोम–मन्त्र में 'हो'–'ओं'–'हाउआ' आदि का उच्चारण। यह विकृतियां जाननी हैं।

ईश–प्रार्थना

हे सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वशक्तिमान, सर्वान्तर्यामी जगत् पिता। हे अजर, अमर, अभय, शुद्ध, पवित्र, सृष्टिकर्ता परमात्मन ! आप कृपा करके हमारे सम्पूर्ण दुर्गुण, दुर्व्यसन और दुखों को दूर कर दीजिए और जो कल्याण कारक, शुभ–गुण, कर्म, स्वभाव और पदार्थ हैं, वह हम सबको प्राप्त कराइये।

हे परमपिता ! इस संसार सागर में चारों ओर काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि बुराइयाँ बड़े वेग से आक्रमण करते रहते हैं, हम बचने का प्रयत्न करके भी बुराइयों और व्यसनों में फंस जाते हैं। हे देव ! हम पर कृपा करके हमें बल, शक्ति और सामर्थ्य प्रदान करो, ताकि हम दुर्व्यसनों को अपने से दूर रखते हुए ठीक मार्ग पर चल सकें। आप हमारे पिता हैं, माता भी आप ही हैं। जैसे माता अपने बच्चे को यत्न करता देखकर अंगुली पकड़कर उसे सहारा देती हैं और फिर अपनी छाती से लगा लेती है। आप हम बच्चों को भी उसी प्रकार सहारा देकर अपनी पवित्र गोद में बैठने का अधिकारी बना दीजिए ताकि हमारा मानव–जीवन सफल हो सके। हम आपकी कृपा से हे नाथ ! सब प्रकार के उत्तम पदार्थ, धन–धान्य, सुख–ऐश्वर्य को प्राप्त करके सच्चे मार्ग पर चलते हुए आपको प्राप्त करें, मुक्ति को प्राप्त करें।

हे दयानिधे ! आपकी अपार दया से हम अन्धकार से प्रकाश तथा अज्ञान से ज्ञान की ओर बढ़ते हुए, यज्ञमय जीवन बनाकर आपकी शरण में–आपकी छत्र–छाया में रहें। हम आपके सच्चे पुत्र बनकर आपके गुणों को धारण करते हुए हे देव ! अपना जीवन धन्य बनाकर आपका आशीर्वाद प्राप्त करें। ज्योतियों की ज्योति हे देव ! आपसे प्रकाश प्राप्त करके तथा अन्यों को सुपथ पर चलाते हुए, कल्याण कर सकें। हे ज्ञान के भण्डार प्रभु ! हम आपके वेद–ज्ञान को प्राप्त कर घर–घर में पवित्र वेद का प्रचार–प्रसार कर सकें, हमें ऐसी मेधावी बुद्धि एवं शक्ति प्रदान कीजिए।

ओ3म् शान्तिः। शान्तिः॥ शान्ति॥।

प्रार्थना

हे सर्वाधार ! सर्वान्तर्यामिन् परमेश्वर ! तुम अनन्त काल से अपने उपकारों की वर्षा किये जाते हो। प्राणिमात्र को सम्पूर्ण कामनाओं को तुम्हीं प्रतिक्षण पूर्ण करते हो। हमारे लिए जो कुछ शुभ है तथा हितकर है, उसे तुम बिना मांगे ही स्वयं हमारी झोली में डालते जाते हो तुम्हारे आंचल में अविचल शान्ति तथा आनन्द का वास है। तुम्हारी चरण शरण की शीतल छाया में परम तृप्ति है, शाश्वत सुख की उपलब्धि है तथा सब अभिलषित पदार्थों की प्राप्ति है।

हे जगत पिता परमेश्वर ! हममें सच्ची श्रद्धा तथा विश्वास हो। हम तुम्हारी अमृतमयी गोद में बैठने के अधिकारी बनें। अन्त:करण को मलिन बनाने वाली स्वार्थ संकीर्णता की सब छुद्र भावनाओं से हम ऊँचे उठें। काम, क्रोध, लोभ, ईर्ष्या, द्वेष इत्यादि कुटिल भावनाओं तथा सब मलिन वासनाओं को हमसे दूर करें। अपने हृदय की आसुरी प्रवृत्तियों के साथ युद्ध में विजय पाने के लिए हे प्रभो ! हम तुम्हें पुकारते हैं। और तुम्हारा आंचल पकड़ते हैं।

हे परम पावन प्रभो ! हममें सात्विक प्रवृत्तियां जागरित हों। क्षमा, सरलता, स्थिरता, निर्भयता, अहंकार, शून्यता इत्यादि। शुभ भावनाएँ हमारी सम्पत्ति हों हमारा शरीर स्वस्थ्य तथा परिपुष्ट हो, मन सूक्ष्म तथा उन्नत हो, आत्मा पवित्र तथाा सुन्दर हो, तुम्हारे संस्पर्श से हमारी सारी शक्तियां विकसित हों। हृदय दया तथा सहानुभूति से भरा हो। हमारी वाणी में मिठास हो तथा दृष्टि में प्यार हो विद्या और ज्ञान से हम परिपूर्ण हों। हमारा व्यक्तित्व महान् तथा विशाल हो।

हे प्रभो ! अपने आशीर्वादों की वर्षा करो। दीनतिदीनों के मध्य में विचरने वाले तुम्हारे चरणाविन्दों में हमारा जीवन अर्पित हो, इसे अपनी सेवा में लेकर हमें कृतार्थ करे।

ओ3म् शान्तिः! शान्तिः!! शान्तिः!!!

प्रार्थना

हे सकल जगत् के उत्पत्तिकर्ता, पालनकर्त्ता और संहारकर्त्ता। समग्र ऐश्वर्ययुक्त, शुद्ध स्वरूप, सर्व सुखों के दाता परमेश्वर ! आपको हमारा बार-बार प्रणाम हो, अगाध श्रद्धा, प्रेम तथा भक्ति से पूरित प्रणाम हो।

हे जगत्-जननी मंगलमयी माँ ! आपकी अपार अनुकम्पा से हम सब आपकी चरण-शरण में उपस्थित होकर यह यज्ञ करने के लिए उद्यत हुए हैं। हे दयालु देव। जिस-जिस पवित्र भाव से प्रेरित होकर हम यह यज्ञ कर रहे हैं, प्रभो ! हमारी वह-वह मनोकाना पूर्ण हो सके, एतदर्थ हमें बल, बुद्धि, सद्विवेक तथा सत्सामर्थ्य निरन्तर प्रदान करें, तथा सत्पुरुषार्थ के लिए हमें सदा प्रेरित करें।

हे ! भक्तवत्सल, करुणामय जगदीश्वर ! आपकी कृपा का वरद हस्त हम पर निरन्तर बना रहे, आपके आंचल में बैठकर हम अविचल सुख-शान्ति तथा आनन्द का निरन्तर अनुभव करें, सफलता सदा हमारे चरण चूमे, मानवता से हम कभी न भटकें, प्राणी मात्र से हमारा प्रेम हो, हम सन्मार्ग पर चलते हुए सदैव यश के भागी बनें, प्रभो ! यही आपसे प्रार्थना है, स्वीकार करो- स्वीकार करो- स्वीकार करो।

ओ3म् शान्तिः! शान्तिः!! शान्तिः!!!

समर्पण-प्रार्थना

हे परमात्मन् ! आप हमारे प्राणों के भी प्राण हैं। हम सांसारिक उलझनों में उलझकर आपको कभी अहंकारवश, दुर्बलतावश, कभी सुख में तो कभी दुःख में भूलकर पाप का आचरण करते हैं। प्रलोभनों और कलुष भावनाओं के जाल में फंसते रहते हैं। और अपने आप को दीन-हीन तथा दुःखी अनुभव करते रहते हैं। अटल विश्वास भर दो, जिससे हम आपको कभी न भूलें। आपकी सर्व-व्यापकता का भाव हमारे अन्तःकरण में सदा जाग्रत रहे। हे सर्व-शक्तिमान् भगवन् ! आपकी कृपा से हमारी समस्त कामनाएं पूर्ण होती रहें। हम आपसे कभी विमुख न होवे। हम सदा आपको अपने चारों ओर विद्यमान समझकर और हमारे प्रत्येक कर्मों को जानकर उनका फल सुख दुःख के रूप में देते हैं। ऐसा मानकर दुष्कर्मों से सदा बचते रहें। हे प्रभो ! आपके ही आश्रय से हमारे समस्त दुःख कष्ट तथा विपदाएं दूर हो सकती हैं।

अतः प्रभो ! आपकी कृपा हमारे ऊपर सदा बनी रहे। हम आपकी प्रसन्नता एवं प्रेम-पात्र बने रहें इस प्रकार हम आपकी स्तुतिरूप नम्रता पूर्वक प्रशंसा सदा किया करें और सर्वदा आनन्द में रहें।

ओ3म् शान्तिः! शान्तिः!! शान्तिः!!!

ईश्वर प्रार्थना

हे परमेश्वर ! आप सर्वव्यापक, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान तथा न्यायकारी हैं। आपने ही मुझे यह जीवन प्रदान किया है। आपके कारण ही मैं विचारने, बोलने तथा कर्मों को करने में समर्थ हूँ। प्रत्येक क्षण मन, वाणी और शरीर से किये जाने वाले समस्त कर्मों को आप जानते हैं। आपसे छुप करके मैं कोई भी काम नहीं कर सकता। आपकी अनुभूति मेरी बुद्धि में प्रत्येक क्षण बनी रहे, जिससे मैं बुरे कर्मों से और उनके दुःख रूप फल से बचकर सुख शान्ति को प्राप्त करूँ, ऐसी आपसे प्रार्थना है।

ओ3म् शान्तिः! शान्तिः!! शान्तिः!!!

प्रार्थना

हे सर्वाधार परमेश्वर ! जो कुछ भूत, भविष्य तथा वर्तमान में है, उन सबके अधिष्ठाता आप ही हैं। वायु आप की आज्ञा में चलती है और अग्नि आपके नियम में जलती है। आप महान हैं। आपको हमारा नमस्कार हो। आपके सहवास में सच्चा सुख है। हम उन्नति के मार्ग पर आगे बढ़ते हुए शान्त चित्र होकर आपकी आराधना करें हमारी वाणी में मिठास तथा दृष्टि में प्यार हो। हृदय दया तथा सहानुभूति से भरा हो। हे प्रभो ! हमें आशीर्वाद दो। हम विद्या और ज्ञान से परिपूर्ण हों हमारा सर्वस्व आपके अर्पण हो। हे स्वामिन् ! आपके बिना हमारा कौन है। आप ही शान्ति के दाता हो। आप अपनी परम भक्ति से हमें श्रेष्ठ बुद्धि तथा मानसिक दृढ़ता दीजिए और हमें अपनी गोद में बैठने का अधिकारी बनायें। हे प्रभो ! हमें पता नहीं कल्याण का मार्ग किधर है। हम घोर घने जंगल में रास्ता भी नहीं ढूंढ़ पाते। अन्तर्यामी हमें न रास्ते में छोड़ना। हमारी बाँह पकड़कर हमें अपने लक्ष्य पर पहुंचाना। प्रभो ! हमें अन्धकार से निकालकर प्रकाश की ओर ले जायें। हमारी आप से यही याचना है। यही प्रार्थना है।

ओ3म् शान्तिः! शान्तिः!! शान्तिः!!!

राष्ट्रीय-प्रार्थना

ब्रह्मन् ! स्वराष्ट्र में हों, द्विज ब्रह्म तेज धारी।
क्षत्रिय महारथी हों, अरिदल विनाशकारी॥
होवें दुधारू गौएं, पशु अश्व आशुवाही।
आधार राष्ट्र की हो नारी सुभग सदा ही॥
बलवान सभ्य योद्धा, यजमान-पुत्र होवें।
इच्छानुसार वर्षे, पर्जन्य ताप धोवें॥
फल-फूल से लदी हों, औषध अमोघ सारी।
हो योग क्षेमकारी, स्वाधीनता हमारी॥

समर्पण–प्रार्थना

हे प्रभो ! सकल जगत के उत्पत्तिकर्ता, समग्र ऐश्वर्यों के दाता, सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी आपकी असीम कृपा से हम लोगों का यज्ञ निर्विघ्नता से पूर्ण हुआ, इसमें जो भी भौतिक ऐश्वर्य प्रदान किये गये हैं, वे सब आपके ही दिये हुए हैं इनमें हमारा अपना कुछ भी नहीं है। हम सबने तो अपनी–अपनी श्रद्धा के अनुसार समर्पण मात्र किया है। नाथ हमारे नम्र समर्पण को स्वीकार कीजिए तथा हमें आशीर्वाद दीजिए कि केवल शाब्दिक तथा भौतिक समर्पण तक ही सीमित न रहें। मन, वचन, कर्म से आपके चरणों में समर्पित हो सकें। यह यज्ञ हमारे अन्दर इदन्नमम् की भावना का विकास करने वाला हो, क्योंकि सब कुछ आपका ही दिया हुआ है। जिस प्रकार से विविध ऐश्वर्यों को प्राप्त करते हुए, हम हृदय से आपका धन्यवाद करते हैं, इसी प्रकार से इनका वियोग हो जाने पर भी हम समभाव से आपको नमस्कार करते रहें। हे प्यारे प्रभुवर ! जिस प्रकार यज्ञ की सुगन्धि दूर–दूर तक वातावरण को सुगन्धित कर देती है। उसी प्रकार से हम भी अपनी बुद्धि और आचरण को पवित्र करते हुए, दूर–दूर तक प्रेरणा के स्रोत बनें। हे दयालु प्रभो ! जिस प्रकार समिधायें अग्नि में समर्पित होकर अग्नि के स्वरूप को ही धारण कर लेती है, हम भी अपने अन्दर निहित काम, क्रोध, मोह, अहंकार, निन्दा आदि की आहुतियां देते हुए, अपनी आत्मा को आपके चरणों में अर्पित कर सकें। हे प्रभो ! यज्ञों को करते हुए हमारा प्रत्येक कर्म यज्ञमय हो जहाँ वह हमारा आत्मिक उत्थान करने वाला हो, वहाँ वह अन्यों के लिए भी कल्याणकारी हो। यही प्रार्थना है। यही याचना है। प्रभो स्वीकार करो, हम सबका बेड़ा पार करो।

ओ3म् शान्तिः! शान्तिः!! शान्तिः!!!

प्रार्थना

हे सत्–चित आनन्द स्वरूप भगवन् ! आपकी अपार कृपा से यह प्रातः व सायंकालीन यज्ञ निर्विघ्नता पूर्वक सम्पन्न हुआ। जिसके लिए हम आपका कोटि–कोटि धन्यवाद करते हैं। इस यज्ञ में जो कुछ भी घी, सामिग्री आदि की आहुति दे पाये हैं। यह सब आपकी देन है। हमारा अपना इसमें कुछ भी नहीं है, कुछ भी नहीं है।

हे दयालु देव ! हम आपसे बार–बार विनयपूर्वक यही वर मांगते हैं, कि आपकी सदा ऐसी कृपा बनी रहे कि हमें आपकी भक्ति वेदाध्ययन और यज्ञ करने का सौभाग्य मिलता रहे।

हम निरोग रहकर इस मंगलवेला में आपकी भक्ति, उपासना और यज्ञ ज्ञान करते रहें। हे प्रभो! हम तेरे अल्पज्ञ जीव हैं। हमारी अल्पज्ञता के कारण जाने–अनजाने हमसे नाना प्रकार की त्रुटियां रह गई होंगी, उनको कृपया क्षमा कीजिए।

हे दीनानाथ ! हमें अधिक से अधिक सब प्रकार से सामर्थ्यवान बनाओ ताकि अगाध श्रद्धा से यज्ञदानादि उत्तम कर्मों को करते हुए अपने जीवन को यज्ञमय और तुम्हारे आशीर्वाद के पात्र बन सकें।

॥ ओ३म् ॥

नियमावली

आर्य वीर दल उत्तर प्रदेश द्वारा संचालित

अमर ... महाशय धर्मपाल स्मृति २६वाँ अखिल भारतीय सत्यार्थ प्रकाश स्वाध्याय प्रतियोगिता २०२...

4551 पुरस्कारों का
जोरदार धमाका

एक पुस्तक जो बदल देगी आपका जीवन

हमारे जीवन का लक्ष्य ??? -निरन्तर उन्नति करना।
जीवन बदलने के साथ-साथ पुरस्कार भी प्राप्त करें।

क्रमांक	पुरस्कारों संख्या	पुरस्कार	चित्रावली
प्रथम पुरस्कार	एक	कार	
द्वितीय पुरस्कार	दो	मोटर साइकिल	
तृतीय पुरस्कार	तीन	लैपटॉप	
चतुर्थ पुरस्कार	चार	वाशिंग मशीन	
पंचम पुरस्कार	पाँच	एल.ई.डी. टी०वी०	
षष्ठम् पुरस्कार	दस	मिक्सी	
सप्तम् पुरस्कार	पच्चीस	प्रेशर कुकर	
अष्टम् पुरस्कार	सौ	टेबिल लैम्प	
केन्द्र टॉप	301	आकर्षक उपहार	
प्रोत्साहन	कुल संख्या के 20% 4100	उपहार	

परीक्षा कब क्यों कैसे ?

परीक्षा का नाम– अमर याज्ञिक महाशय धर्मपाल एम0 डी0 एच0 स्मृति सत्यार्थ प्रकाश स्वाध्याय प्रतियोगिता।

उद्‌घोष– तमसों मा ज्योतिर्गमय-अंधकार से प्रकाश की ओर चलें।

योग्यता– कोई भी बालक-बालिका, अध्यापक-अध्यापिका, स्त्री व पुरुष जो सातवीं कक्षा पास हो इस परीक्षा में भाग ले सकता है। ❁ ध्यान रहे आचार्यों, विद्वानों व आर्यसमाज व आर्यवीर दल के मुख्य धारा के अधिकारियों को छोड़कर कोई भी भाग ले सकता है।

प्रवेश राशि– 150 रुपये (एक सौ पचास रुपये) जमा करके फार्म प्राप्त कर सकते हैं।

फार्म प्राप्ति के स्थान– आर्य समाजों के कार्यालयों, आर्य बुक स्टोरों, गुरुकुलों तथा आर्य कार्यकर्ताओं से फार्म प्राप्त कर सकते हैं।

परीक्षा केन्द्र– निज निवास।

परीक्षा विधि– सह पुस्तक प्रणाली– अर्थात् सत्यार्थ प्रकाश नामक अमर ग्रन्थ को एक बार पूरा आद्योपान्त पढ़कर अपने घर पर ओ0 एम0 आर0 सीट पर बड़ी सावधानी पूर्वक उत्तर दें। सभी प्रश्न अनिवार्य हैं।

पाठ्यक्रम– सत्यार्थ प्रकाश नामक ग्रन्थ की भूमिका से लेकर अन्त तक।

प्रश्न– सभी प्रश्न बहुविकल्पीय (Objective Type) होंगे, प्रश्नों की संख्या एक सौ पचास 150) होगी।

❁ सभी प्रश्नों के अंक समान होंगे उत्तर के विकल्प वाले गोले को ही बॉल पेन से रंगें।

उत्तर पुस्तिका– उत्तर पुस्तिका पर काट-पीट करना वर्जित है। किसी प्रश्न का गलत उत्तर होने पर काट-पीट कर सही न करें। सफेद स्याही (डिलीटर फ्लूट) का प्रयोग करने पर पूरी ही उत्तर पुस्तिका का मूल्यांकन नहीं होगा। याद रहे एक अंक के प्रलोभन में सभी को न खो बैठें।

सही उत्तर की विधि– सही उत्तर देने की विधि एक उदाहरण द्वारा समझाई जा रही है।

प्रश्न– सत्यार्थ प्रकाश परीक्षा के मुख्य संयोजक हैं।

(a) संतोष आर्य (b) राष्ट्रवशु आर्य (c) जितेन्द्र भाटिया (d) प्रहलाद शास्त्री।

O.M.R. सीट पर (A) (B) ● (D)

जिस प्रकार से इस प्रश्न का सही विकल्प (C) है और सी वाले गोले को रंगा गया है। उसी प्रकार सभी प्रश्नों के उत्तर देने हैं। **बोनस–** यदि प्रतिभागी ने आर्यवीर दल/आर्य वीरांगना दल का कोई शिविर किया हो तो शिविर के दो अंक मेरिट में जोड़ दिये जायेंगे व उत्तर पुस्तिका के साथ प्रमाण पत्र की छाया प्रति लिफाफा में रखना अनिवार्य है।

अन्तिम तिथि– फार्म जमा करने की अन्तिम तिथि 10 अगस्त 2025 होगी। इसके बाद प्राप्त

होने वाली O.M.R. सीट स्वीकृत नहीं होगी। **प्रतियोगिता बोर्डः** O.M.R. सीट भरकर उसके साथ फार्म के ऊपर वाला भाग और फार्म पर अपना फोटो लगाकर उसे स्वयं अटैस्ट करके लिफाफे में रखकर जहाँ से फार्म प्राप्त किया है उस स्थान पर 10 अगस्त 2025 से पहले अवश्य जमा कर दें। या गुरूकुल वि0 वि0 वृन्दावन, मथुरा के पते पर कोरियर, पंजीकृत या स्पीड पोस्ट से भेज सकते हैं। ध्यान रहे लिफाफा में O.M.R. फार्म, प्रमाण पत्र आदि के साथ पिन या आलपिन का प्रयोग पूर्णतः वर्जित है। मैरिटः पूरी परीक्षा में अब्बल अपने वाले छात्र-छात्राओं का 151 बड़े पुरस्कारों के लिए लकी ड्रा 30 नवम्बर 2025 दिन रविवार को अनेक प्रशासनिक अधिकारियों, साधु-सन्तों एवं राजनेताओं के पावन सानिध्य में वेद मन्दिर, मसानी चौराहा, मथुरा (उ0 प्र0) में चयन होगा इसके बाद शेष 4400 पुरूस्कार सभी एजेंसियों के 20 प्रतिशत अब्बल अंक लाने वाले प्रतिभागियों को केन्द्र टॉप व प्रोत्साहन पुरस्कार व प्रमाण पत्र दिये जायेंगे। ध्यान रहे लकी ड्रा वाले दिन ही 151 बड़े पुरस्कार चयनित प्रतिभागियों को पुरस्कार वितरण की तिथि व स्थान की घोषणा कर दी जायेगी।

कार्यालयः गुरुकुल विश्वविद्यालय, वृन्दावन (मथुरा) 281121 (उ0 प्र0)

किसी भी प्रकार की जानकारी के लिये सम्पर्क कर सकते हैं-

9761625523, 9719375848, 9627696396, 9760734747

जीवन के हर प्रश्न का उत्तर जानने के लिये

अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश एक बार अवश्य पढ़ें।

◆ हमारे दुःखों का कारण क्या है? ◆ विश्व में यज्ञ से मानव कल्याण कैसे सम्भव है? ◆ हम शक्ति किससे और कैसे प्राप्त करें? ◆ हमारे गृहस्थ सुखी गृहस्थ कैसे बनें? ◆ हमारे परिवार आदर्श कैसे बनें? ◆ उत्तम सन्तान कैसे बनें? ◆ हमारी शिक्षा पद्धति कैसे हो? ◆ कैसी शिक्षा से भारत विश्व गुरु बनेगा? ◆ राजनीति का सच्चा स्वरूप क्या है? ◆ धर्म और विज्ञान एक दूसरे के विरोधी या सहायक। ◆ ईश्वर का सच्चा स्वरूप व उसकी भक्ति कैसे करें? ◆ धर्म क्या है और उसे कैसे धारण किया जाय? ◆ भारत की अवनति के क्या कारण हैं? ◆ हमारे जीवन में सुख, शान्ति व समृद्धि कैसे आये? ◆ शारीरिक, आत्मिक व सामाजिक उन्नति कैसे करें? ◆ कुशाग्र बुद्धि कैसे हो? ◆ सम्प्रदाय, मत, मतान्तर, गुरुडम देश की उन्नति में सहायक या बाधक? ◆ सबकी उन्नति में अपनी उन्नति कैसे सम्भव? ◆ ईश्वर ने यह सृष्टि क्यों और कब बनाई? ◆ प्राचीन ऋषियों के लगभग 3500 ग्रन्थों का निचोड़। ◆ वैचारिक क्रान्ति का शंखनाद करने वाला। ◆ लाखों लोगों ने जीवन को बदलने वाला। ◆ राष्ट्रभक्ति की भावना को जगाने वाला। ◆ आजादी के शहीदों की गीता। ◆ क्रान्तिकारियों का प्रेरणा स्रोत।

आओ हम सभी अमर ग्रंथ सत्यार्थ प्रकाश एक बार अवश्य पढ़ें

तपोभूमि मासिक सम्बन्धी घोषणा

(फार्म–4 नियम 8 देखिये)

1.	प्रकाशन का स्थान	मथुरा
2.	प्रकाशन की अवधि	मासिक
3.	मुद्रक का नाम व पता	मित्तल कम्प्यूटर प्रिंटर्स, वृन्दावन रोड, मथुरा
	(क्या भारत का नागरिक है)	हाँ
	(विदेशी है तो मूल देश)	नहीं
	पता	आकाशवाणी के सामने, वृन्दावन रोड, मथुरा
4.	प्रकाशक का नाम	आचार्य स्वदेश
	(क्या भारत का नागरिक है)	हाँ
	(विदेशी है तो मूल देश)	नहीं
	पता	सत्य प्रकाशन, वृन्दावन मार्ग, मथुरा
5.	सम्पादक का नाम	आचार्य स्वदेश
	(क्या भारत का नागरिक है)	हाँ
	(विदेशी है तो मूल देश)	नहीं
	पता	सत्य प्रकाशन, वृन्दावन मार्ग, मथुरा
6.	उन व्यक्तियों के नाम व पते जो समाचार पत्र के स्वामी हों तथा जो समस्त पूँजी के एक प्रतिशत से अधिक के साझेदार या हिस्सेदार हों।	आचार्य स्वदेश, वृन्दावन मार्ग, मथुरा

मैं आचार्य स्वदेश एतद् द्वारा घोषित करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिये गये विवरण सत्य हैं।

मथुरा — आचार्य स्वदेश

दिनांक 14 फरवरी 2025 — प्रकाशक के हस्ताक्षर

॥ ओ३म् ॥

श्री विरजानन्द ट्रस्ट आर्ष गुरुकुल वेदमन्दिर, मथुरा
में

ऋषि बोधोत्सव पर
51 कुण्डीय यज्ञ का भव्य आयोजन
दिनांक 26 फरवरी 2025 बुधवार

सज्जनो!

प्रायः सांसारिक बन्धनों में जकड़े गृहस्थ जीवन में व्यक्ति मनुष्य जीवन के वास्तविक उद्देश्य से विमुख हो जाता है। अज्ञानतावश अपने ही विपरीत कर्मों से दुःखों के द्वार खोल लेता है। इस बात को ध्यान में रखकर सर्वजन के हितचिन्तक ऋषियों ने सबके कल्याण की भावना से अनेक प्रकार के यत्न किये हैं। उन प्रयत्नों में ही धार्मिक आयोजनों की योजना रखी। इन धार्मिक आयोजनों के बहाने से व्यक्ति समय निकालकर यज्ञादि शुभ कर्म में प्रेरित हो जाता है। विद्वानों के उपदेश सुनकर अपना कल्याण करने में समर्थ हो जाता है। इसी भावना से प्रेरित होकर आपके अपने ही श्री गुरु विरजानन्द आर्ष गुरुकुल, वेदमन्दिर, मथुरा में प्रतिवर्ष महाशिवरात्रि पर्व ऋषि बोधोत्सव के रूप में मनाया जाता है। 51 कुण्डीय यज्ञ भी सर्वकल्याण की कामना से रखा जाता है। आप भी इस पावन अवसर पर सपरिवार यजमान के रूप में पधारें ऐसी हमारी कामना है। अति सुन्दर हो यदि आप भारतीय वेश- भूषा में आयें। यजमान बनने के इच्छुकजन अपने साथ घी, कटोरी, कपूर, दियासलाई, चम्मच, लोटा अवश्य लायें, जिससे यज्ञ करने में सुविधा हो। यदि ना ला सकें तो यह व्यवस्था यहाँ पर भी रहेगी। 26 फरवरी 2025 बुधवार को प्रातः 8 बजे आप यज्ञस्थल पर अवश्य आ जायें। यज्ञ के बाद भण्डारे की व्यवस्था है प्रसाद भी यहीं ग्रहण करें। पुनः नगर कीर्तन 2 बजे से शोभायात्रा के रूप में होगा। अतः इस पावन सुअवसर को हाथ से न जाने दें।

कर यज्ञ यथावत दान करे, फल सौगुन होय ऋषि बतलाते।
दुःख दूर करे दुखिया जन के, उसके करता सुख–साधन पाते।
सद्पात्र विचार करे धन दान, मिलें फल जो न कभी मिट पाते।
सब प्राणिन को भय हीन करे, उसके फल की गणना न बताते॥

उत्सव की सफलता का दायित्व आप सभी याज्ञिक जनों पर है। अतः सभी सांसारिक कार्यों को विराम देकर आयोजन को सफल बनाकर पुण्य के भागी बनें। **सम्पर्क सूत्र– 9456811519**

निवेदन

अध्यक्ष	मंत्री	कोषाध्यक्ष
आचार्य स्वदेश	**डॉ. प्रवीण कुमार अग्रवाल**	**दिनेशचन्द बंसल**

विशेषः वेदमन्दिर, मसानी चौराहा से (कच्चीसड़क) आचार्य प्रेमभिक्षु मार्ग पर स्थित है।

जब से हम आये हैं सरकारी ड्यूटी पर।
धर्म कर्म सब टांग दिया है उस दिन ही खूंटी पर।।

चाहे पुलिस विभाग हो, चाहे न्यायालय हो, चाहे शिक्षा विभाग हो, चाहे विद्युत विभाग हो आप चले जाइये काम कराने के लिए सब जगह मानो भिखमंगे झोली फैलाये बैठे हैं। आपका काम चाहे कितना ही न्यायोचित क्यों न हो, आप चाहे कितने निर्धन हों, आप हाथ जोड़िये, अपनी मजबूरी बताइये, समाज हित दुहाई दीजिये लेकिन ये स्वार्थ पारायण राक्षस जरा भी द्रवित नहीं होते हैं। चाहे पत्थर पिघल जाये पर इनका हृदय द्रवित नहीं होता। बेचारे निर्धन बच्चे जैसे-तैसे धन जुटाकर पढ़ाई करते हैं। हमने देखा कि विश्व विद्यालय के बाबू जान बूझकर उनके अंक पत्रों में उनके नाम आदि की गड़बड़ी कर देते हैं। उसे ठीक कराने के लिए बच्चों से पांच-दस हजार ऐंठ लेते हैं। वे बेचारे कर्जा लेकर के अपने अंक पत्र ठीक कराते हैं, कार्यालयों से अश्रुपात करते हुए निकलते हैं। सरकार निर्धनों को अन्नादि देती है ये महाभुक्खड़ उसे भी डकार जाते हैं, सरकार निरीह गायों के लिए पैसा देती है ये महाराक्षस उसे भी डकार जाते हैं।

अब प्रश्न यह है इस महामारी का समाधान क्या है? तो इसका एक मात्र समाधान शिक्षा की समानता और गुरुकुल शिक्षा प्रणाली का पुनरुद्धार हो। जब तक विचार में परिवर्तन नहीं लाया जाता है विचारों के द्वारा प्रत्येक व्यक्ति को अपने प्रति देश के प्रति समाज के प्रति संवेदनशील नहीं बनाया जाता है तब तक इसका समाधान कठिन ही नहीं असम्भव है। आज आर्ष गुरुकुलों की दुर्दशा हो रही है। सरकार का उनकी ओर ध्यान नहीं है, समाज का भी ध्यान नहीं है। इसीलिए देश में सर्वत्र अराजकता का ताण्डव नृत्य चल रहा है। आयें सब मिलकर करें महर्षि दयानन्द जी महाराज द्वारा दिया गया उद्घोष समझें कि वेदों की ओर लौटो। तभी हमारी स्वतंत्रता का लाभ मिलेगा और गणतन्त्र दिवस का मनाना भी सफल होगा। माता शान्ति नागर जी के वेदनापूर्ण उद्गारों की ओर ध्यान जायेगा।

समर्पित राष्ट्र शहीदों को, नमन करने से क्या होगा।
उठो और उठकर यह सीखो, शहादत कैसे होती है।
गगन में कहर भरे बादल, चमन का पात-पात घायल।
टूटती पग-पग पर पायल, धुल रहा आंखों का काजल।
हो रहे तार-तार आंचल छुट रहे हाथों से साहिल।
देख गुलशन की वीरानी, बैठ रोने से क्या होगा?
उठो अरु उठकर यह सीखो हिफाजत कैसे होती है।
कत्ल कर घूम रहे बन्दे न्यायविद आज हुए अन्धे।
मांगते नित नेता चन्दे, बुन रहे फांसी के फन्दे।
देखकर बढ़ता भ्रष्टाचार, आह भरने से क्या होगा?
उठो और उठकर यह सीखो बगावत कैसे होती है?
बन्धु का खून बहाया है बहिन का दीप बुझाया है।
पिता का स्वप्न जलाया है वधू का हर्ष मिटाया है।
खुशी पर गम की छाया है दशों दिश मातम छाया है।
व्यर्थ गणतन्त्र मनाते हो, यह उत्सव व्यर्थ सजाते हो।
उठो और उठकर यह सीखो सजावट कैसे होती है।

'तपोभूमि' फरवरी 2025 R.N.I. No. 2321/57 रजि. सं. MTR नं. 04/2025-27

सत्य प्रकाशन मथुरा के अनमोल प्रकाशन

शुद्ध रामायण सजिल्द	320.00	वीर नारियां	30.00	रामायण कालीन आदर्श नारियां	15.00
शुद्ध रामायण अजिल्द	250.00	वीर बालिकायें	30.00	महाभारत कालीन आदर्श नारियां	15.00
योग दर्शन	150.00	आदर्श देवियां	30.00	इतिहास के स्वर्णिम पृष्ठ	12.00
शंकर सर्वस्व	120.00	भारत और मूर्ति पूजा	30.00	बाल मनुस्मृति	12.00
मानस पीयूष (रामचरित मानस)	100.00	यज्ञमय जीवन	30.00	ओंकार उपासना	12.00
शुद्ध हनुमच्चरित	90.00	आर्यों की दिनचर्या	30.00	पुराणों के कृष्ण	12.00
शुद्ध कृष्णायण	80.00	चार मित्रों की बातें	20.00	दण्डी जी का जीवन पथ	10.00
शान्ति कथा	80.00	भारतीय संस्कृति के तीन प्रतीक	20.00	नमस्ते ही क्यों	10.00
नित्य कर्म विधि	70.00	मील का पत्थर	20.00	आदर्श पत्नी	10.00
सुमंगली	70.00	भ्रांति दर्शन	20.00	देश विदेश की वीर बालिकाएं	10.00
दो मित्रों की बातें	60.00	शान्ता	20.00	पतिव्रता नारियां	10.00
दो बहिनों की बातें	60.00	संध्या रहस्य	20.00	सती वीरांगनाएं	10.00
वैराग्य दिवाकर	50.00	गीता तत्व दर्शन	20.00	आदर्श माताएं	10.00
वैदिक संध्या विधि	50.00	गृहस्थ जीवन रहस्य	20.00	ब्रजभूमि और कृष्ण	8.00
महर्षि दयानन्द का दार्शनिक चिन्तन	50.00	श्रीमद् भगवत गीता	20.00	सच्चे गुच्छे	8.00
वैदिक स्वर्ग की झांकियाँ	40.00	वैदिक ऋषिकाएं एवं विदुषी नारियां	20.00	भागवत के नमकीन चुटकुले	8.00
चाणक्य नीति	40.00	आदर्श सती नारियां	20.00	मानव तू मानव बन	8.00
महाभारत के प्रेरक प्रसंग	40.00	दयानन्द और विवेकानन्द	15.00	जीजा साले की बातें	5.00
स्वाधीनता की वीरांगनायें	40.00	शुद्ध सत्यनारायण कथा	15.00	सर्प विष उपचार	4.00
महर्षि दयानन्द का निरालापन	35.00	महाभारत के कृष्ण	15.00	सत्यार्थ प्रकाश मेरी दृष्टि में	4.00
वेद प्रभा	30.00	महिला गीतांजलि	15.00		

आवश्यक सूचना

1. पाठकगण वर्ष 2025 के लिये वार्षिक शुल्क 200/- रूपये अविलम्ब भिजवायें तथा पन्द्रह वर्ष की सदस्यता हेतु 2100/- भिजवायें।
2. पत्रिका भेजने की तारीख प्रतिमाह 7 व 14 है, कृपया ध्यान रखें।

बुक-पोस्ट
छपी पुस्तक/पुस्तिका

सेवा में,

....

.... दिल्ली ....

अ

15 ....

....

.... पिन कोड ....

पत्र व्यवहार का पता :-
व्यवस्थापक - कन्हैयालाल आर्य
सत्य प्रकाशन
डाकघर- गायत्री तपोभूमि, वृन्दावन मार्ग (आचार्य प्रेमभिक्षु मार्ग), मसानी चौराहे के पास, मथुरा (उ० प्र०) 281003
मोबा. 9759804182

Yogendra # 9927136600

मुद्रक : स्वामी, प्रकाशक, सम्पादक आचार्य स्वदेश के लिए मित्तल कम्प्यूटर प्रिंटर्स, वृन्दावन रोड, मथुरा में छपकर सत्य प्रकाशन मथुरा से प्रकाशित